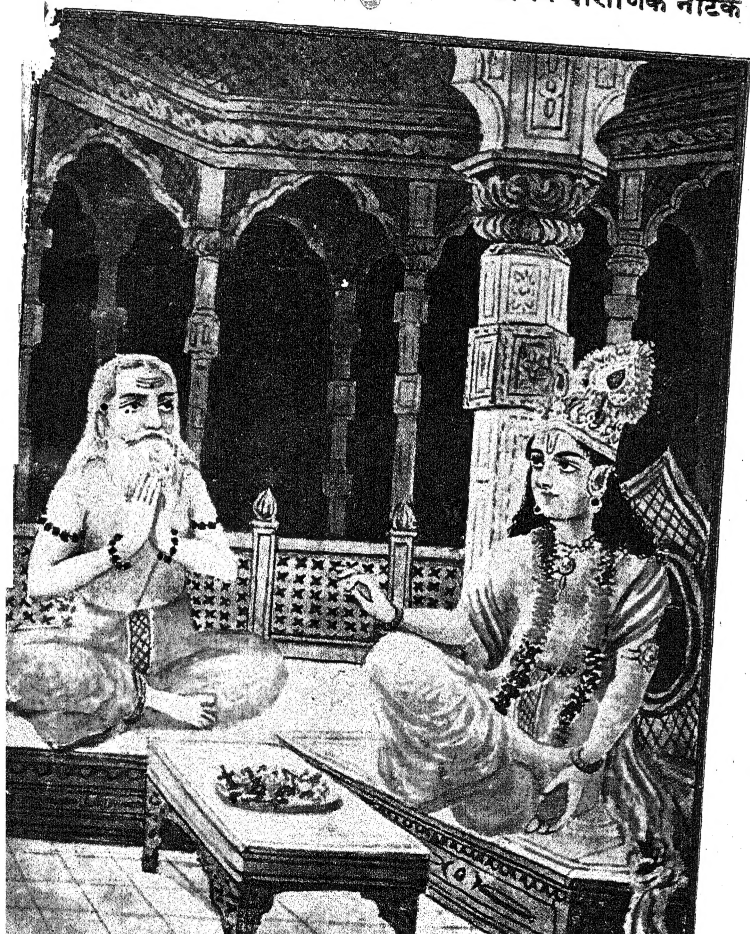
महात्मा-विदुर

सचित्र पौराणिक नाटक।



* ॐ *

महात्मा विदुर

(सचित्र शिक्षाप्रद नाटक)

लेखक :—

श्रीनन्दकिशोरलाल

उप सम्पादक—"मिथिला मिहिर"

दरभङ्गा

प्रकाशक :—

श्रीसूर्य्यदेव नारायण सिंह

"ॐकार पुस्तकालय"

लहेरियासराय

(दरभङ्गा)

प्रथम बार १०००] सं० १९८० [मूल्य १) रुपया

प्रकाशक—
श्रीसूर्य्यदेव नारायण सिंह
"ॐकार पुस्तकालय"
लहेरियासराय (दरभङ्गा)



मुद्रक—
विश्वम्भरनाथ खन्ना
"खन्नाप्रेस"
८६ मुक्ताराम बाबू ष्ट्रीट, कलकत्ता ।

भूमिका

कोटिशः धन्यवाद उस परम पिता परमात्मा को है जिसकी असीम कृपा से आज मैं इस तुच्छ भेंट को लेकर हिन्दी साहित्य सेवियों की सेवामें उपस्थित हुआ हूं। यदि इस भेंट से हिन्दी साहित्य एवं मानव समाज का कुछ भी उपकार हो सका और हिन्दी प्रेमियों को कुछ भी रुचिकर लग सका तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूंगा।

मैं श्री बाबू सूर्य्यदेव नारायण सिंह जी मालिक ओंकार पुस्तकालय को धन्यवाद दिये विना नही रह सकता जिनकी असीम कृपा अनुग्रह से यह पुस्तक प्रकाशित हो हिन्दी प्रेमियों के कर कमलों तक पहुंच सकी है।

साथ साथ मैं अपने परम मित्र श्रीमान बाबू शिवनारायण सिंहको भी हार्दिक धन्यवाद देता हूं जिन्होंने कृपाकर स्वलिखित "कलयुगीसाधु" नामक प्रहसनको इस नाटकमें समावेश करनेकी आज्ञा देकर मुझे वाधित किया है।

शीघ्रता में छपनेके कारण इस पुस्तकमें यदि कोई त्रुटी रह गई हो तो विज्ञ महाशयगण मुझे क्षमा करेंगे तथा उसे। सहर्ष सूचित करेंगे जिससे द्वितीय आवृत्तिमें सुधार दी जा सके।

विनीत

"नन्दकिशोर"

प्रका

श्रीसूर्य्यदेव

"ॐकार

लहेरियास

पात्र-सूची

पुरुष पात्र

महात्मा विदुर
धृतराष्ट्र
दुर्योधन
शकुनी
दुःशासन
भीष्म
द्रोणाचार्य्य
साधु अलवेलानन्द
ढोंढ़ाई दास
टंकोर दास
धौम्य ऋषि
श्री कृष्ण चन्द्र
शेठ भावर मल्ल जी
पुरोचन

स्त्री पात्र

पद्मावती
गान्धारी
कुन्ती
शान्ति
द्रौपदी
भगवती
विजया
सहेलियां, दिगंगनागण, दाई
वैष्णवीगण, इत्यादि ।

युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव बालकगण, घातकगण,
खनक; नाविक, दारुक, इत्यादि

॥ श्रीः ॥

महात्मा विदुर

नाटक

मङ्गलाचरण

(सूत्रधार, नटी, विद्यार्थी वगैरहका आना)

गाना

सब—जै जगवन्दन गिरिजानन्दन ऋद्धि-सिद्धि दातार।
गणपति जनपति तेरेहिं गतिमति विघ्नविदारन हार ॥ जै०
परसत पदपावन कलुष नशावन चरण शरण बलिहार ॥ जै०
जन-मन रञ्जन भव-भय भञ्जन पुरवहुं काज हमार ॥ जै० ॥



सूत्रधार—हमारे भाग्यके तारे अहा हा ! खूब चमके हैं।
जो सज्जनगण कृपा करके इधर आ आज दमके हैं॥
बड़ा एहसान उनका है जो सज्जन सभ्य हैं आगत।
करूं मैं फूल बरसाकर सभीका आज शुभ स्वागत॥

आगतमण्डलीका स्वागत।

(पुष्पाञ्जलि देना)

सब—हाँ, स्वागत और धन्यवाद !

नटी—क्यों प्राणनाथ ! आज कौनसा नाटक रङ्गमञ्चपर आयगा ? इस नाट्य-उद्यानमें कौनसे रसका स्रोत बहाया जायगा ?

सूत्रधार—प्रिये, आज आगतमण्डलीके सामने एक महात्माका अभिनय रचाया जायगा ! अश्लील प्रेम, नायक-नायिकाकी विरहगाथाके बदले, भक्तिरसका स्रोत बहाया जायगा।

नटी—एक महात्माका ?

सूत्रधार—हां, एक महात्माका और ऐसे महात्माका, जिसने अन्यायके आगे कभी अपना सर नहीं झुकाया, उचित बात कहनेमें किसीका भी भय नहीं पाया।

लोगोंके हित हेतु मैं, उसका पुण्य चरित्र।
दिखलाऊं सिखलाऊं गुण, उत्तम और पवित्र॥

नटी—प्यारे ! उसका नाम तो, दीजे मोहि बताय।
सू०—आज विदुर नाटक करो, सज्जनको सुखदाय॥



नटी—विदुर नाटक ? आज स्वामीको यह नवीन खेल कैसे मनभाया है ?

सूत्र—क्योंकि इसमें बड़ा चमत्कार समाया है।

नटी—चमत्कार ?

सूत्र०—हां, क्योंकि, प्रिये ! महात्मा विदुरका पवित्र चरित्र देश एवं समाजकी उन्नतिका आधार है; उसके अनुकरणमें सभीका बड़ा उपकार है।

विदुरने त्यागका अनुराग भारतको सिखाया है।
सभीको ज्ञानकी ज्योति दिखाकर पथ सुझाया है॥
डूबाकर आपको भक्तिमें औरोंको डूबाया है।
जहां हुई धर्मकी हानी सहायक होके धाया है॥

नटी०—वाह प्राणाधार ! बहुत ठीक है आपका विचार।
विदुर जैसे यदि भारत निवासी आज हो जायें।
तो भारतवर्षकी सारी बलायें छणमें खो जायें॥

सब—ऐसे महात्माको धन्य हैं।

सूत्र०—और धन्य है, उस सुजला, सुफला, शस्यश्यामला भारत भूमिको, जो एकसे एक बढ़कर नररत्नोंको पैदा करती है।

सब—धन्य है ! धन्य है !!

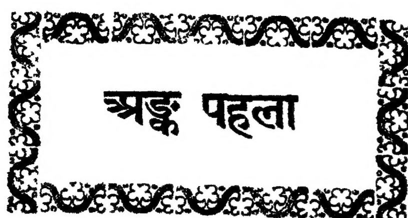
नटी—तो फिर स्वामी विलम्ब क्यों करते हैं ? शीघ्र हो इसे खेलकर भारतवासियोंको, उनका पुराना गौरव देखाना चाहिये, घोर निद्रासे जगाना चाहिये।

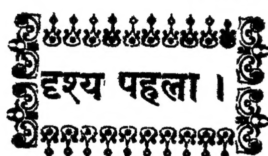
गाना

पुण्य भूमि भारत है, रत्नोंकी खान।
जिसमें एकसे एक देखो भये कितेक लोग महान्।
रक्खी अपनी टेक, मुड़े नहि नेक, चाहे तनमनधन आय
छूट, धर्मके नामपर किया सब कुछ कुर्बान ।

[सबका नाचते हुए जाना]







अन्तःपुर।

(पद्मावती और उसकी सहेलियोंका आना)

गाना।

सहेलियां—देखो, छाई है कैसी बहार।
छिटकत भटकत छटा अपार ॥ देखो० ॥
शीतल मन्द सुगन्ध पवन तन,
रभसि परसिके करत मगन मन।
शीतल चन्द्र सुधा बरसावे,
राति संजोगिनीको सुख छावे
देखो, छाई है कैसी बहार ॥

१ सहेली—सखी पद्मा! सुनो तो सही, निगोड़ी कोयल किस तरह कुहू, कुहू सुना रही है।

२ सहेली—और तू लज्जाके मारे अपने अङ्ग-अङ्गको छिपा रही है।



३ सहेली—नहीं २। बल्कि यों कहो, कि तू भी अपनी नज़ाकत-पर आप ही बलिहार हुई जा रही है।

४ सहेली—हां, क्यों नहीं? हमारी सखी क्या किसीसे कम है?

पद्मा—नहीं २ सखियो! यह सारा तुमलोगोंका मिथ्या भ्रम है। तुमलोग सदा यों ही बात-बातमें रसीली तानें लगाया करती हो और श्रृङ्गार-रसकी नदियाँ बहाया करती हो!

रूपवती हो मदमाती हो, और रसीली नार,
जब तो तेरी बातमें, है रसकी भरमार।

१ सहे०—चन्द्र चकित सूरज चकित, चकित जगत संसार।
क्यों न ऐसे रूपपर प्रीतम हों बलिहार॥

२ सहे०—नैन मुसकान सखी हैं, सारे सुखके सार।

३ सहे०—प्रीतमके आधार नार बिन सूना है संसार॥

४ सहे०—हां, सचमुच हमारी सखी रसोंकी खान है।
उसमें ये सारे गुण वर्तमान है॥

१ सहे०—लेकिन सखी इसकी लज्जा तो गज़ब ढानी है। मुखारविन्दकी यह मुस्कान, शर्मीली निगाहोंकी आन बान तो चांदको भी आज लजाती हैं।

पद्मा—बस सखी! बस; रहने दो। क्यों व्यर्थ मुझे प्रशंसाके परदे-में शर्माती हो; क्या आज सबोंने कसम खाई है; जो मुझे बनाती हो?



२ सहे०—क्यों नहीं बनायेंगे, क्या पुष्प सुवासका स्रोत हमारे ओटमें बहाये जायेंगे ? बहिन ! हम सब तो यहांसे उस समयतक कभी न जायेंगे, जबतक, कि छोटे महाराज स्वयं गलेहार न हो जायेंगे। तबतक मैं यहीं बैठी रहूंगी और देखूंगी, कि तुम क्या-क्या रङ्ग लगाती हो, किस तरह अपनेको बचाती हो।

पद्मा—हैं ! यह क्या ? सहसा हमारी बाईं आंख क्यों फड़क उठी ? चारों ओर ये मंगलमय दृश्य क्यों नज़र आ रहे हैं ?

२ सहे०—सखी ! ये सब तुम्हारे भाग्यको जगा रहे हैं।

३ सहे०—हां, हां, जान पड़ता है, छोटे महाराज अब आ रहे हैं। यही कारण है, कि तुम्हें ये शुभ लक्षण दिखा रहे हैं।

४ सहे०—अच्छा तो अब हम सब भी बहिन पद्माके आरामके कांटें न बनें। रात भी अधिक बीत चली है, चलो सोनेके लिये चलें। [सहेलियोंका जाना]

पद्मा—हैं ! क्या सचमुच प्रीतम आ रहे हैं ? क्या यह उन्हींके पैरोंकी आवाज़ है, जो मेरे हृदयको मधुर शब्दोंसे प्रफुल्लित बना रहे हैं। हैं यह क्या ? वह चित्तको अपनी तरफ खींचनेवाली मनोहर पदध्वनि, वह चंचल चित्तको शान्त बनानेवाली आहट क्या हुई ? क्या हमारे प्रभु आते-आते रुक तो नहीं गये ? भगवन् ! यह मैं क्या देख रही हूं ? प्राणवल्लभ और संन्यासीका वेश !

[संन्यासीके वेशमें विदुरका आना]

विदुर—प्रिये पद्मा! मुझे देखकर अकचकाती हो? यह वेश देखकर अकचकाती हो? प्रिये! इसमें आश्चर्यित होनेकी कोई बात नहीं है, इतने दिन रहकर राजका स्वाद पा-चुका, राजसुखका आनन्द उठा चुका। जहाँ तृष्णाकी प्यास दिनदिन बढ़ती है, जहाँपर शान्तिका नामोनिशान नहीं है, जो केवल अशान्तिका ही स्थान है, वहांसे प्रस्थान करनेके लिये ही, आज, विदुर तय्यार होकर आया है—अज्ञानियों और अत्याचारियोंको त्यागने ही मेरा यह वेश बनाया है।

अब तलक अज्ञानियोंके संगमें अज्ञानसे।
अन्याय अत्याचारकी बातें सुनी बहु कानसे॥
अब चित्त व्याकुल हो उठा इस पापके स्थानसे।
बस दूर रहना है उचित धृतराष्ट्रकी सन्तानसे॥

प्यारी पद्मा! अब मैं विदा—

पद्मा—विदा?

विदुर—हां, विदा। अब यहां हमारे टिकनेकी कहीं जगह नज़र नहीं आती। सम्पूर्ण कुरुपुरी अविचार, स्वार्थपरता और अधर्ममें डूबी हुई दिखाती है। बैर, फूटकी आग सुलग रही है। यह शीघ्रही कुरुवंशको ध्वंस कर देगी। इसलिये आगे ही से सावधान हो जाना उचित है। प्रिये! मैं आज ही रातको शान्तिके लिये रवाना हो जाऊंगा।



आज जो तुम मेरा यह वेश देख रही हो, वह शान्तिधाम ही के लिये है।

पद्मा—प्रभो! राजपुरीको त्यागकर कहां जाओगे?

विदुर—वहां, जहां क्रोध, द्वेष, और अभिमान नहीं हैं; वहां, जहां, आत्मान्धता और स्वार्थपरताका नामोनिशान नहीं है।

मार है फिटकार है धिक्कार है सुख साजको।
खून हो इन्साफ जिससे छोड़ दो उस राजको॥

पद्मा—फिर मेरा परिणाम?

विदुर——तुम यहीं करो आराम।

पद्मा—क्या यही आपका आदेश? मैं भोगूं सुख और आप क्लेश? नहीं, यह कभी हो नहीं सकता।

मुझको इन चरणोंसे है आराम भी कल्याण भी।
छोड़ देंगे आप तो, बस छोड़ देगी जान भी॥

विदुर—नहीं, नहीं मेरा आदेश नहीं। तुम पतिव्रता स्त्री हो, जो तुम्हारी चाह होगी, वही मेरी भी सलाह होगी। तुम चाहो यहां रह सकती हो या मैके जा सकती हो।

पद्मा—क्या साथ ले चलनेमें कोई इन्कार है?

विदुर—महारानी! मेरा और ही विचार है।

पद्मा—आप भिखारी और मैं महारानी! प्रभो! अब इस महारानी शब्दको हटाइये और अपना विचार सुनाइये।

विदुर—पद्मा! पद्मा!! मैं संसारको त्यागकर बनवासी होऊँगा। तुम बनके दुःखोंको क्यों कर सह सकोगी?



पद्मा—सहूंगी, सहूंगी और जरूर सहूंगी। जब आप वनवासी होनेके लिये, तैय्यार हैं, तब यह दासी भी वनवासिनी होनेके लिये तैयार है। मैं आपके जीवनकी संगिनी हूं, तो दुखसुख दोनोंमें सदा संगिनी बनी रहूंगी। स्त्रीके लिये पतिही सब कुछ है। पतिकी सेवामें समय बिताना ही स्त्री-जातिका सबसे बड़ा धर्म है। जिसतरह मछली पानीसे अलग होकर कभी जीती नहीं रह सकती, उसी तरह आपसे विलग होकर मैं कभी जीवित नहीं रह सकती।

स्त्री है देह उसका हुस्न वो ज़ेवर है पति।
स्त्री है आरसी तो उसका जौहर है पति॥
स्त्रीका मोद दायक सुखका सागर है पति।
वास्तवमें हर पतिव्रताका ईश्वर है पति॥

विदुर—अच्छा, तब तैयार हो जाओ। देर मत लगाओ। इस पापपुरीसे जितना जल्द निकल जायें, उतना हीं अच्छा है। पद्मा! अब इस भेषको दूर करो! इन जवाहिरों और जेवरोंको दूर करो और एक संन्यासिनी-भिखारिणीका भेष धरो। पद्मा! धीरे धीरे चलो, राज-पुरीसे निकल जायें। कोई जानने नहीं पाये। महाराज अन्धराज और पूज्य पितामहको मालूम हो जायगा तो, स्नेहके बन्धनमें पड़कर सारा काम बिगड़ जायगा और हमलोगोंका उच्च उद्देश्य पूरा न होने पायगा।

[पद्मका जाना]



गाना

विदुर,—भला हरीका प्रेम जगत्में ॥ भला०—

हरिसे प्रेम किये दुख मेटे, होवे बेड़ा पार।
प्रेमहिसे भगवान् भगतके बसमें हो निरधार ॥
प्रीतिकी रीति न्यारी, है यामें बसे मुरारी।
प्रेमी प्रेमहि पै बलि जावे धरे न दूसर नेम ॥
जगत्में भला हरीका प्रेम ॥ भला०—

ओह! माया माया!! फिर माया!!! कुरुपुरीके लिये माया! जिस राज्यमें साक्षात् कलिका अवतार दुर्योधन राजाके गलेका हार है, जिस राज्यमें पक्षपात है, धर्म और न्यायका कुछ भी नहीं विचार है, उस राज्यके लिये माया! संसार मैंने तुझे अच्छीतरह पहचाना। तेरे यहां दुष्टों, खुशामदियों, पापियों और पाखण्डियोंका सत्कार है। साधुसन्तों और पण्डितोंके लिये तिरस्कार ही तिरस्कार है। दुष्ट! अब मैं तुम्हारे फन्देमें पढ़नेको नहीं। पद्मा, आगई? आओ, तुम्हारा ही इन्तजार है।

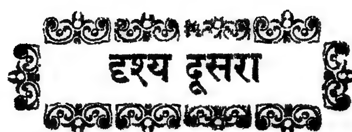
[संन्यासिनीके वेषमें पद्माका आना]

पद्मा—तो लीजिये, यह दासी भी तैयार है।

विदुर—अच्छा, तो धीरे-धीरे निकल चलो।

पद्मा—इस अधर्मस्थानको छोड़, सत्य और शान्तिके मन्दिरकी राह लो।

[दोनोंका जाना]



दृश्य दूसरा

प्राङ्गण।

(धृतराष्ट्र और गान्धारीका आना)

धृतराष्ट्र—हाय, विदुर मम प्राण पियारे।
मुझे छोड़कर कहां सिधारे॥
इस जीवनके तुही सहारे।
आजा भाई! प्राण हमारे॥

गान्धारी! कितने दिन बीत गये। किन्तु किसीने आकर विदुरका कोई संवाद न सुनाया। हाय! सुदेवकी लली पद्मा भी अपने पतिके साथ चली गई; इससे हृदयको और भी बेकली है। क्या करूं? कहां जाऊं? भाई विदुरको कहां पाऊं? विदुर! विदुर!! हमारे प्राणके प्यारे विदुर! हमारे जीवनके सहारे विदुर! भाई! क्या किया? किस अपराधसे इस अन्धेको भुला दिया?

हे भाई तू क्यों भाईसे मुंह मोड़ गया।
रिश्ता था प्रेमका उसे तोड़ गया॥
तू ज्ञानका दीपक था अन्धेरेके लिये।
अन्धेर है अन्धेको कहां छोड़ गया॥

गान्धारी—स्थिर होइये, स्थिर होइये। जल्द उनका पता



लग जायगा। इधर-उधर कितने ही लोग भेजे गये हैं। कोई न कोई उनका संवाद अवश्य लायगा।

धृत०—लायगा? कौन लायगा? एक दिन नहीं, दो दिन नहीं, एक वर्षसे भी ज्यादा समय बिताया; किन्तु हाय! उस धर्म और न्यायके अवतारका किसीने भी कोई समाचार नहीं सुनाया। हा विदुर! भाई विदुर! तुम्हें क्या हो गया? प्रिये! पकड़ो। मेरे हाथोंको पकड़ो। मुझे सम्हालो। हां! मुझे सारा संसार सूना दिखाई दे रहा है। विदुरकी याद आते ही कलेजा फटा जाता है। मस्तक चक्कर खाता है। विदुर! विदुर!! हा विदुर!!! कहां हो?

(मूर्च्छित होना)

गान्धारी—हाय, हाय! महाराज! महाराज! मूर्च्छित होकर गिर पड़े। अरे कौन कहाँ हो? दौड़ो, दौड़ो।

धृत०—नहीं प्रिये! नहीं; तुम न घबड़ाओ। यह अन्धा नहीं मरेगा। अगर यह मर जायगा, तो फिर विदुरके वियोगको कौन सहेगा? यही विचारकर तो भगवान्ने हमारे ललाटमें मृत्यु शब्दका नाम ही नहीं लिखा है। अभी क्या?

अभी तो बहुत देखना दुख बदा है।
विदुरके लिये रोना धोना सदा है॥

(भीष्म और द्रोणका आना)

भीष्म—महाराज! आज तुम्हारी खोई हुई मणिका पता लग

गया। तुम्हारे जीवनके सहारेको खोज निकाला।

धृत०—हमारे जीवनके सहारे—विदुरका ?

भीष्म—हां, तुम्हारे प्राणके अधारे—विदुरका।

धृत०—हमारे विदुरका पता लग गया ? किसने लगाया ? किसने प्यासेके मुखमें अमृतका बिन्दु टपकाया ?

भीष्म—द्रोणाचार्य्यने।

धृत०—आचार्य्य ! आचार्य्य !! कहां हैं ? आचार्य्य महाशय कहां हैं ? उन्हें बुलाओ ; मैं उनको प्रणाम करूंगा। मैं उनका ऋणी हूं। कृतज्ञता प्रकाश करूंगा।

द्रोण०—महाराज ! मैं यहीं हूं।

धृत०—अहा, हा। आपकी मेरे ऊपर बड़ी ही कृपा हुई। अच्छा, पहले आप मेरा प्रणाम स्वीकार कीजिये, फिर विदुर कहां हैं, यह बताइये।

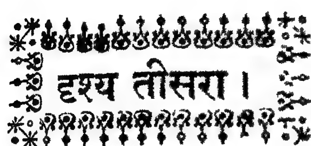
द्रोण—महाराज ! आजकल विदुरजी अपनी सती स्त्री-सहित संन्यासीका वेश धारणकर, धौम्य ऋषिके आश्रममें विराज रहे हैं।

धृत०—संन्यासीके वेशमें ?

द्रोण०—हां, संन्यासीके वेशमें।

धृत०—हाय ! हमारे अतुल राज्यका अधिकारी विदुर आज भिखारी बन रहा है।

दुखाया दिलको है उसका अवश्य है यही कारण।
जो तजकर राजके सुखको किया संन्यास है धारण॥



स्थान—मार्ग ।

[अलवेलानन्द साधुका गाते हुए प्रवेश ।]

दादरा ।

अल०—साधु बाबा बनेते मजा भारी ॥ टेक ॥

घरमें नहि नारी मिले, बाहिर मिले अनन्त ।

रास रचो क्रीड़ा करै, पुनः कहालो सन्त ॥

वनमें गंगा नहाकर सदाचारी ॥ साधु ॥

चिथरा तनपर जुरत नहीं, नहि भोजन भर-पूर ।

सन्त बनत नव पट मिलत, मक्खन मोतीचूर ॥

मिले दूध मलाई भरन थारी ॥ साधु ॥

काम करन दिन भवनमें, बात करत कटु तात ॥

पर तुम्मा लिये हाथ वे, पद नाचत जलजात ॥

कहि सिद्ध मुनीश ब्रह्मचारी ॥ साधु ॥

खेनी पीनीका नहीं, गृहमें रहत उपाय ।

धुनि रमते गांजा गिरै, पुरियन पुरियन आय ॥

छनछनमें है रहती चिलम जारी ॥ साधु ॥

भवन रहत मूरख बने, तजि त्रिकाल लखात ।

भूतप्रेत भय रोग सब, तनि विभूति ते जात ॥

क्यों ? बनते हैं भगवन भवन छारी ॥ साधु ॥



अहा! साधु होना भी क्या ही अच्छी बात है! न हर हर है, न खट खट है। झंझटका तो कोई नाम नहीं। पड़े पड़े रहना और परायेका माल चखना। न कहीं आना और न कहीं जाना, बस सेबक सातियोंके साथ गप्प लड़ाना और पलपल छनछनमें गांजेका दम चढ़ाना। न किसीका देन है और न तकाज़ा। दूसरोंसे द्रव्य लेना और उसीसे मौज उड़ाना। न किसीकी सेवा है और न टहल, वरन् दूसरों हीपर हुकुम चढ़ाना और पड़ेपड़े पैर दबवाना। न जप है न तप; न यजन है न भजन; बैठे बैठे धूनि रमाना; विभूत चढ़ाना और आँखें मूंद माला ठकठकाना। मूर्ख लोग क्या जाने कि बाबा क्या करते हैं। वे तो सीधे समझते हैं, कि बाबा बड़े भारी महात्मा हैं। बस, क्या ही मजा है! न ध्यान है न ज्ञान, न विनय किया, न प्रार्थना, पर बन गये महात्मा। क्या ही प्रतिष्ठा है! क्या ही इज्ज़त!

कुछ मूर्ख कहने आते हैं, कि बाबा घरको क्यों त्याग दिया? योग-भोग दोनों साथ ही रखते। घर छोड़कर साधु होनेमें कोई लाभ नहीं, और प्रमाण देते हैं कि: –

घरके घूमर घेरमें, राम चरण लवलीन।
तुलसी ऐसे सन्तको, कह करवा कोपीन॥

(हंसता है) अहा! हा! हा! मूर्ख यह नहीं जानते कि तुलसी तो साधु नहीं था' वह तो केवल स्त्रीके व्यंग बोलीपर जाकर साधु हो गया था। उसका मन यथार्थमें तो



घरकी शशिमुखीके कमलनेत्रोंपर भंवरेसा भूल रहा था। वह तो अन्धा था, कि एकही शशिकला देख सकता था, किन्तु यहां तो —— लाखों लाख शशिकी ज्योति चारो ओर छिटकती हुई नज़र आती है। फिर घरके घूमर घरमें क्या होने चला ?

(ढोढ़ाई भगत एक कोइरी का प्रवेश)

ढोढ़ाई—महाराज ! दण्डवत्।

महाराज—खुश रहो, मस्त रहो। कहो, अच्छे तो हो न ?

ढोढ़ाई—अच्छा रहूंगा क्या ख़ाक ! घर तो मेरे लिये अङ्गार-सा हो रहा है। बाहर जाता हूं, तो कुछ आनन्द भी पाता हूं ; परन्तु जहां दरवाजेपर पैर डाला, कि बस मत पूछिये घरवाले सभी खांव-खांव करके झपट पड़ते हैं। मैं मर नहीं जाता, वरन् सब गति हो जाती है।

महा०—कहो, कहो बच्चा ! ऐसा काहे होता है ?

ढो०—बाबा ! बात तो कुछ नहीं है, बातमें बात इतनीही है कि वे मुझसे खेतीके कामोंमें पूरा काम चाहते हैं और मैं नहीं करता।

महा०—सो क्यों ? काम करते हो क्यों नहीं ?

ढो०—काम करें तो कैसे ? यहां तो भूखके मारे तेरहो तरेगण गिनता हूं।

महा०—सो क्यों ?

ढो०—पूछते हैं क्यों ? घरकी तो ऐसी हालत है, कि मूसा



चारो ओरसे घूमकर आता है और देहरीपर सर पटक कर चित-पट हो जाता है। फिर हमलोगोंकी क्या बात है ! यहाँ तो ढाईसेर सुबह और ढाईसेर शाम हो तो काम चले।

महा०—क्या तुम इतना चट कर जाते हो ?

ढो०—इतना चट कर जाते हो, महाराजजी ! काम करते करते तो खून सूखता है। उस कड़ाके धूपमें, जब कि पशु-पक्षी भी छायाकी शरण लेते हैं, हल जोतना, कुदाल चलाना और खुरपी ठेलना, कुछ सहज बात नहीं है और तिसपर भी जब भर पेट दाना न मिले तो बाबा ! मत पूछिये, छठीका-दूध याद आ जाता है।

महा०—ओह ! तब तो तुम्हारी विपत्तिका ठिकाना नहीं है। क्यों तुम्हारे माता-पिताको तुमपर दया नहीं आती ?

ढो०—बाबा ! यह सब मत पूछिये, हमारे जैसा माता-पिता, भगवान् सात घर शत्रुको भी न दे, न मालूम कब उनका जनाजा यहांसे उठेगा। वे तो सदा मुझपर आगही उगले रहते हैं।

महा०—तो क्या तुम घरमें रहना नहीं चाहते ?

ढो०—घरमे किस लिये रहूंगा ? मुझे कोई जोरू बेटी है, कि उसके लिये घर अगोरे रहूं ?

महा०—क्या तेरा विवाह नही हुआ ?

ढो०—विवाहकी बात मत छेंं। पूबेटी बिक्रीकी चाल तो



आज कल समाजमें ऐसी चल पड़ी है, कि रुपये हो तो कोई पांच सौ-हज़ारमें लड़की ख़रीद ले,अगर न हो तो बस ठनठन गोपाल बनकर रह जाय। मुझे खाने को तो दाना नहीं, विवाहके लिये रुपये कहां से लाऊं ?

महा०—क्या तुम घरसे रूठ कर चले हो ? नहीं, नहीं, ऐसा मत करो, जाओ फिर घर घर ही है।

ढो०—नहीं, बाबा ! अब तो प्रतिज्ञा करली है कि बौआकर मर जाऊं, तो मर जाऊं ; लेकिन घर न लौटूं ।

महा०—(स्वगत) ओह ! हो ! आज तो एक अच्छा सौदा हाथ लगा। क्या अच्छी बात है कि, इसे चेला बनाकर अपने साथ रख लूं। और अपना काम कराऊं, यह पेटू है। ज़रूर मेरे साथ रह जायगा। जब हलुआ, पूरी, मोहन भोग पायगा, तब तो कुत्ता जैसा साथ लग जायगा। झोरा मंत्रा ढोने के काम लायक अच्छा होगा।

(प्रकट) तब बच्चा ढोढ़ाई ! कहां जाओगे, रहजाओ मेरे साथ। व्यर्थ कहाँ घूमोगे। प्रति दिन हलुआ पूरी और मोहन भोग उड़ाना और बैठे-बैठे धूनि रमाना। न काम न धाम। केवल साधुकी सेवामें लगा रहना। क्यों पसन्द है ?

ढो०—(स्वगत) बाप रे बाप ! हलुआ पूरी तो बाप जन्म नहीं खाया, बूझ पड़ता है, कि मेरा दिन अब अच्छा हुआ, मेरे भाग्यके सितारे चमक उठे।



ढो॰—(प्रकट) जब महाराजजीकी आज्ञा है, तो फिर उसे मैं कैसें काँट दूं ? "साधुनकी सेवा बैकुण्ठमें वासी"।

महा॰—अच्छा तो ले, यह कंठीमाला और रामभजन कर और गुरु भक्तिमें सदा लगा रह। (कंठीमाला देकर पीठ ठोककर) आजसे तुम्हारा नाम ढोंढ़ाई दास हुआ। (स्वगत) चेला तो मूंड लिया। अब इससे काम लेना चाहिये। नहीं, तो सारा खिलाना-पिलाना व्यर्थ हो जायगा। जो काम करा लूंगा सो करा लूंगा ; नहीं तो यह मेरे कौन काम आयेगा ? (प्रगट) ढोंढ़ाई दास ! जाओ एक तुम्मा पानी लाओ और डोल डालको जाना है।

(जाता है)

[टंकोर दास नामका चलते पुर्जे साधुका बगलमें झोला एक हाथमें डण्डा और कांधेपर फटनाल लिये हुए प्रवेश]

टंकोर—महाराज जीको दण्डवत्।

महा॰—खुश रहो ! खुश रहो ! (ठहरकर) को है ? टंकोरदास ? कहो, कहो ; बहुत दिनोंपर तुम्हारा दरसपरस हुआ है, अच्छे तो थे न ? अभी कहांसे चले आ रहे हो ?

टंकोर—महाराज ! जब मैं आपसे विदा होकर रामेश्वर गया, तब वहां यह विचार मनमें आगया, कि कुछ काल महाराष्ट्र प्रान्तमें गुजारूं ; क्योंकि सुननेमें आया, कि वहांके सती-सेवक साधुओंकी बड़ी सेवा करते हैं।



महा०—कहो, कहो, हलुआ पूरी तो वहां खूब छनती होगी ?

टंकोर—हां, छनती तो थी खूब। नित्य दिन मलाई और मोहनभोग ही से भोग लगता था। चारो ओर लोग घेरे हुए रहते थे और गांजेकी धूम गज्जर मचाये रहते थे। बड़ा आनन्द था, बड़ी प्रतिष्ठा थी। बड़े-बड़े घरोंकी चन्द्र-मुखी ललनाएँ, रातरातको दर्शनार्थ आया करती थीं। मेरी दुहाई चारो ओर फिर गई थी, लेकिन इसी बीचमें—

महा०—इसी बीचमें क्या ?

टंकोर—महाराज! क्या कहूँ ? बज्र गिरे, उस दुष्टपर जो महाराष्ट्रकी गलीमें घूम-घूमकर लगा लेक्चर देने और साधुओंको सताने।

महा०—सो क्या ?

टंकोर—वह यही लेक्चर झाड़ने लगा, कि गरीब अंधे, लंगड़े और लूले तथा असहाय वृद्ध तथा अनाथोंको भिक्षा दो, और न कि हृष्टपुष्ट जटाजूट धारण करके, साधु होनेके ढोंग रचनेवालोंको। साथ ही साथ उसने गांजेकी भी बड़ी निन्दा की। अब महाराज जो! मत पूछिये, चारो ओर-से विपत्तिका आसमान मेरे ऊपर टूट पड़ा। अब तो साधुओंकी एक भी कोई सुननेवाला नहीं। बस ; भागा भागा यहांपर आ गया हूं।

महा०—(क्रोधित स्वरसे) ऐं ? साधुओंपर ऐसा घोर अत्या-



चार !' आवे तो वह मूर्ख इस विहारमें, कि उसकी हाड़ हाड़ छिटका डालूं। शैतान कहींका साधुओंकी निन्दा !

[ढोढ़ाई दासका जल लिये प्रवेश]

टंकोर—अच्छा महाराज ! दुष्ट अपनी करनीका फल भोगेगा ; आप शान्त होइये। कहिये ये महात्मा (ढोढ़ाईकी ओर संकेत करके) कौन हैं ?

महा०—ये हैं श्रीढोढ़ाईदास जी, मेरे परम आज्ञाकारी चेले।

टंकोर—महाराजके चेले ? (ढोढ़ाईको दण्डवत् करता है)

ढोढ़ाई०—(दण्डवत्का जवाब देकर, स्वयं) कहां मैं हल जोतता और खुरपी ठेलता था और लोग मुझे मूर्ख कहा करते थे, सो बस कण्ठीमाला धारण करनेहीसे साधुलोग पैरों पड़ रहे हैं। वाह रे भाग्य !

टंकोर—अच्छा ढोढ़ाईदासजी ! ज़रा होइये, एकदम गांजा उड़ाइये तो। कई दिनोंसे गांजे बिना जी चकपका रहा है।

महा०—जाओ, धूनिमेंसे आग लेकर जल्द चिलम भर लाओ। (जाकर चिलम चढ़ाये आता है और टंकोरदासको देता है।)

टंकोर—(चिलम लेकर ज़ोरोंसे) अलख ! खोल दे पलक, देख दुनियाकी झलक। जो न पिये गांजाकी कली, उस मर्दसे औरत भली। जो करे गांजाकी अदगोई-बदगोई, ताके वंशमें रहे न कोई। (महाचोर झट दम लगाता है और महाराजजीको देता है)



महा०—(दम लगाकर) टंकोरदास ! मैंने तो आज रमितामें चलनेका विचार कर लिया है, चलो न थोड़ा मौज़ उड़ाया जाय ?

टंकोर—रामजीके आसरेसे बहुत ठीक है। इसी मौजके लिये तो घरवार सब छोड़ा है, न तो साधु होनेमें लाभ ही क्या था ? घर गांव तो इसी मौजके लिये छोड़ा है।

महा०—ढोढ़ाईदास ! उठाओ झोटा मंत्रा चलो, डेरा कूच करो। (सब जाते हैं)



दृश्य चौथा ।

धौम्य ऋषिका आश्रम ।

(यज्ञकी आग जलती हुई देख पड़ना)

हाथमें फूलकी डालियां लिये हुए ऋषिबालकोंका आना ।

गाना ।

१ बालक—हिल मिलकर आओ, एक दिल कर गाओ
कृष्णगुण गान ।

२ बालक—कृष्ण, ज्ञान, कृष्ण ध्यान, कृष्ण जान,
तनमन प्राण ।

३ बालक—वही पैरवर, वही सरवर, सबका अफसर
है सुखोंकी खान ।

४ बालक—कृपा निधान, वह भगवान, उसपर वारुं
अपनी जान ॥

सब—हिल मिलकर आओ, एक दिल कर गाओ,
कृष्ण गुण गान ॥

(पद्माका प्रवेश ।)

पद्मा—बालको ! तुमलोग फूल तोड़ लाये ? अच्छा, जरा ठहर जाओ । पहले मैं आश्रमको बुहारकर और नहा



घोकर जल ले आऊं ; फिर ऋषि महाराजके लिये पूजाकी सामग्री जुटाऊं। (झाड़ू देना)

१ बालक—मां! ऋषि महाराजके आनेका समय अबतक नहीं हुआ?

पद्मा—नहीं बच्चा। वे अभी स्नान ही करते होंगे।

२ बालक—मां! सुनता हूं, कि विदुर जी महाराज कुरुराजके वंशधर हैं और तुम राजरानी हो?

३ बालक—तो फिर राजके सुखोंको छोड़कर वनके दुःखोंको क्यों भोगती हो?

पद्मा—बच्चा! दुःख क्या? ऋषि-मुनियोंकी सेवा करनेमें भला कहीं दुःख होता है? जो भगवान्के ध्यानमें दिन-रात लीन रहते हुए भी, दुःखका ज्ञान नहीं करते, भला उनकी सेवामें मैं क्यों कर दुःखका ज्ञान करूं?

दुःख नहीं सुख ही सुख हैं सेवामें ऐसे सन्तोंकी।
हितकी हानि कभी ना होवे, संगतिमें गुणवन्तोंकी॥
अच्छेके संग बुरा भी मिलकर अच्छे पदको पाता है।
देखो, कीट फूलके संग हो, ईस शीश चढ़ जाता है॥

(हवनकी लकड़ी लेकर विदुरका आना)

विदुर—पद्मा! लो, यह हवनकी लड़की लो। जाओ, इसे यथास्थान रख आओ। पद्मा! क्या कहूँ? आज मेरा मन नाच रहा है। उसी नटवरके साथ नाच रहा है। आज श्याममय वनमें श्यामसुन्दरका सुन्दर चित्र मेरे हृदय



पटपर चित्रित हो गया। मन प्रफुल्ल हो उठा। नन्द-लालाके प्रेमने हमें मतवाला कर डाला। ओह—

तनिकहुं विसरत है नहीं, वह मूरति सुखधाम।
नाचत नैननमें सदा, वही श्याम अभिराम॥

अहा हा! कैसा अनूप रूप है! कैसा सुन्दर सरूप है। कृष्ण, कृष्ण! गोविन्द, गोविन्द!

(आपही आप ध्यानमें मग्न हो जाना)

पद्मा—प्रभु-ध्यानमें लीन हो गयी। पद्मा! पद्मा! यह देखकर ही तुम्हारी छाती जुड़ाती है। पतिको सुखी देखकर तू आप भी सुख पाती है। एक वह दिन था, जब नाथ कुरुपुरीमें अन्याय और अत्याचारको देखकर अपना जीवन भार की तरह बिताते थे, राजमहलमें रहकर भी दुःख ही दुःख उठाते थे और आज एक दिन यह है, जब कि वे यहां, इस जंगलमें, सुख ही सुख पाते हैं और शान्तिके साथ अपना जीवन बिताते हैं। हे भगवन्त! तुम्हारी महिमा अनन्त है! हे कृष्णचन्द्र, आनन्दकन्द! हमारे स्वामीके हृदयमें आनन्दका सञ्चार करो और दुःखका भार हरो।

ऋषिबालकगण—मां, मां! वह देखो, ऋषि महाराज आ रहे हैं।

पद्मा—प्रभो! पूजाकी सभी सामग्रियां तैयार हैं।

(धौम्य ऋषिका आना)

धौम्य—बेटी! मैं तुम्हारी सेवासे सदा सन्तुष्ट रहता हूं।



आजतक मैंने तुम्हारे कामोंमें कोई त्रुटि नहीं पायी। तुम महारानी होकर इतनी तकलीफ क्यों उठाती हो ? किस लिये अपनी सुन्दर देहको हमारी सेवामें गलाती हो ?

यह कोमल अंगको तुम किस लिये तपमें तपाती हो।
जवाहिर लाल तजकर ठोकरे जंगलकी खाती हो॥
लगाकर ख़ाक तनमें खाकमें खुद्को मिलाती हो।
अचम्भित हूं कि रानी होके क्यों पीड़ा उठाती हो॥

पद्मा—महाराज !

स्वामी हैं बनवासी मेरे मैं क्यो महल सजाऊं।
स्वामी हुए भिखारी फिर मैं क्यों रानी कहलाऊं॥

धौम्य—धन्य ! पद्मा, धन्य !!

पति सेवा को तू सारे सुखोंका सार समझी है।
पतिव्रता सती है तू, व सच्ची आर्य्य पुत्री है॥

(आगे बढ़कर) यह कौन ? यह कौन ध्यानमें लीन हो रहा है। क्या विदुर ? भक्त विदुर ? धन्य हो भक्त तुम और धन्य है तुम्हारी भक्ति। विदुर ! तुम भक्ति-देवीकी शरणमें आये हो। उनको प्रसन्न करो। तुम्हारा मनोरथ सफल होगा।

विदुर—महर्षि ! क्या इस अधमका ऐसा भाग्य होगा, कि वह आनन्दमयी भक्तिदेवी इसके ऊपर कृपादृष्टिकी वृष्टि करेंगी ?



धौम्य—भाग्य होगा क्यों? हो चुका। जिस समय तुम खोटे कामोंके डरसे राजमहलको त्यागकर इस तपोवनमें आ उपस्थित हुए, उसी समय तुम्हारा भाग्य उदय हो चुका। नहीं तो, इतर जनोंकी क्या मज़ाल है, कि वे मायामोहके जालसे अपनेको निकाल सकें?

विदुर—प्रभो! आशीर्वाद दें, कि फिर उस फन्देमें फंसने न पाऊं। जबतक जीवित रहूं, इस पतित जीवनको आपही की सेवामे बिताऊं।

धौम्य—नहीं वत्स! तुम्हारा अमूल्य जीवन इस छोटेसे काममें समाप्त न होगा। तुम्हारे द्वारा ईश्वरका एक उच्च उद्देश्य पूरा होगा।

विदुर—प्रभो! मैं तो क्षुद्र कीट पतङ्गके समान हूं। मुझसे भगवान्‌का कौनसा उद्देश्य पूरा होगा?

ऋषी सेवामें यह जीवन लगा देनेके लायक है।
ऋषी चरणोंकी धूलोंमें मिला देनेके लायक है॥

कृष्ण, कृष्ण,! गोविन्द, गोविन्द!!

[ध्यानमें लीन हो जाना]

ऋषि बालकगण—सावधान! सावधान!! यह धौम्य ऋषिका स्थान है।

[भीष्म और धृतराष्ट्रका आना]

भीष्म—ऋषिराज! यह आपका दास भीष्म: आपको प्रणाम



करता है।

धृत०—महर्षि! यह अन्धा हतभाग्य आपके चरणोंमें सर झुकाता है।

धौम्य—जय हो, जय हो।

विदुर—आप लोगोंके चरणोमें यह विदर माथा नवाता है।

पद्मा—आपकी कुलवधू पद्मा भी श्रीचरणोंमें शीश झुकाती है, आशीर्वाद दीजिये।

भीष्म—तुम्हारी धर्ममें अटल भक्ति हो।

धौम्य—कुरुराज! आज अचानक ही आपका इस ओर क्यों कर आगमन हुआ?

धृत०—महर्षि! क्षमा कीजिये। पहले आप विदरको एकबार हमारे गलेसे लग जानेको कहें।

धौम्य—विदर! अपने बड़े भाईकी इच्छा पूरी करो।

[विदुरका गले लगना]

विदुर—(स्वागत) गोविन्द! गोविन्द!! तुम्हारी क्या इच्छा है? क्या फिर उस मायाके जालमें फंसना पड़ेगा? (प्रकट) भाई धृतराष्ट्र! आप मेरे लिये इतना क्यों घबड़ा रहे हैं?

धृत०—क्यों घबड़ा रहा हूं? दो अपना हाथ दो। (विदुरका हाथ अपने कलेजेपर धरकर) देखो, देखो विदुर! देखो देखो निष्ठुर! तुम्हारे विना इस अन्धेके हृदयका क्या हाल हो रहा है। विदुर! इस अन्धेके एक तुम्हीं आधार



हो। मैं तुम्हारे बिना क्योंकर निराधार रह सकता हूं ? महर्षि ! आप हमारे प्राण विदुरको हमें प्रदान करें ; नहीं तो इस हतभाग्यको भी अपने आश्रममें आश्रय दान करें।

भीष्म—विदुर ! तुम महाज्ञानी हो ; तुम्हारा हृदय दूसरेके दुःखोंको देखकर मोमकी तरह पिघलनेवाला है। तुम सहज ही समझ सकते हो, कि कुरुराजका क्या मलाल है तुम्हारे विरह दुःखमे उनके हृदयका क्या हाल है !

धौम्य—वत्स विदुर ! मैं तुमसे पहले ही कह चुका हूं कि तुम्हारे द्वारा भगवान्‌का एक महान् उद्देश्य पूरा होगा। जाओ, बड़ोंकी बात मानकर तुम अपने स्थानको जाओ।

बढ़े दिन दिन सुयश तेरा तुम्हारे तपकी सिद्धी हो।
तुम्हारे धर्म्मसे औरोंके धर्म्मोंकी भी वृद्धि हो॥

धृत०—विदुर चलो, हमारे साथ राजपुरीको चलो। अब मैं राजकाजके झंझटसे अपनेको हटाऊंगा और युधिष्ठिरको राजगद्दीपर बिठाऊंगा। चलो, खुशी खुशी युधिष्ठिरको तिलक चढ़ाऊं और अपने हृदयको जुड़ाऊं। क्यों, चुप क्यों हो ? विदुर ! बोलते क्यों नहीं ?

विदुर—आर्य्य ! उस पापपुरीमें प्रवेश करनेको जी नहीं चाहता। किन्तु जब ईश्वरकी यही इच्छा है और आपलोगोंकी भी यही आज्ञा है, तो मैं चलनेको राजी हूं, किन्तु कुछ शर्त्तके साथ।

धृत०—क्या शर्त्त ?



विदुर—यही कि :—

किया है वेश जो धारण इसे दमभर निभाऊंगा ।
न अपने काममें त्यागी हुई वस्तुको लाऊंगा ॥

भीष्म—धन्य विदुर, ! धन्य !

धृत०—मंजूर है, मंजूर है। विदुर! तुम्हारे लिये सब कुछ मंजूर है। चलो, आज तुमको पाकर मेरा बल दूना हुआ ; आज मनोरथ सफल हुआ। ऋषिराज! आप भी चलकर मेरी झोपड़ीको पवित्र करें।

ऋषिबालकगण—महाराज! क्या आप हमलोगोंको भी ले चलेंगे ?

धृत०—हां, हां, चलें, आप लोग भी चलें ।

धौम्य—बालको! चलो, भगवान्‌का गुणगान करते हुए राजपुरीके लिये प्रस्थान करो ।

(ऋषिबालकगणका गाना)

गाना—

जै जै श्रीआनन्दकन्द, श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् ।
ब्रजधर मुरलीधर जै श्रीधर ।
सुन्दर सुघर सुजान ॥ जै० ॥
जै नटनागर सब गुण आगर ।
करत चराचर गुणगान ॥ जै० ॥
जै नंदनन्दन, असुर निकन्दन,
सनक सनन्दन धरते ध्यान ॥ जै० ॥

(सबका जाना)



निशि दिन तुम्हरो नाम जपत हम,
पल छिन तुम्हरो ताप तपत हम।
करुणासागर सब गुण आगर,
आवहूं आवहूं मुरली अधरधर ॥ चरण ॥

दोहा—कृष्ण मुरारी हो कहां, टेर सुनो यदुराय।
नेकु कृपा इत कीजिये, दर्शन दीजिये आय ॥

(श्रीकृष्णचन्द्रका आना)

कृष्ण—अरी फूआ ! तू यहाँ बैठी है ?

कुन्ती—कौन है रे ? कृष्ण ? आओ प्राणधन, आओ।

पद्मा—अहा ! चातकीके प्राणधन श्यामघनका उदय हुआ ! ओह ! कैसा अनूप रूप है। कैसा सुन्दर सरूप है।

कुन्ती—कृष्ण ! अभी तुम्हारी ही बात हो रही थी।

कृष्ण—हमारी बात क्या हो रही थी ? जान पड़ता है कि तुम लोग हमारी निन्दा कर रही थीं।

पद्मा—नहीं, नहीं। भला कृष्णकी निन्दा कौन करेगा ? मित्र तो क्या, शत्रु भी नहीं कर सकता।

कृष्ण—यह कौन हैं फूआ ?

कुन्ती—पहचानते नहीं ? अरे यह विदुरजीकी पत्नी पद्मावती हैं।

कृष्ण—अच्छा, तब तो यह भी हमारी फूआ होंगी ? तो लो फूआ ! यह कृष्ण तुम्हें प्रणाम करता है।

(प्रणाम करना)



पद्मा—ओ दीदी ! यह यह क्या किया ? यह क्या किया ? साधनाके धन, तपस्याके रत्न और ऋषि-मुनियोंके आराधनाकी वस्तुको मेरे पैरोंपर लिटा दिया।

जिसके दर्शनको ऋषि वो महर्षि मुहताज हों।
जिनकी आँखोंके इशारे पूर्ण सबके काज हों॥
जो जगत ईश्वर हो, हरएक लोकके महाराज हों।
वह हमारे पांवपर सरको नवाये आज हों॥

ओह यह तूने क्या किया, यह क्या किया, क्या कर दिया।
मुझसे नीचा करके उनको, मुझको नीचा कर दिया॥

कृष्ण—नहीं, नहीं। प्रणाम्य हो; इसलिये मैंने तुम्हें प्रणाम किया है। देखो फूआ, इसीलिये मैं अपने सगे सम्बन्धियोंसे ज्यादा नहीं मिलता।

पद्मा—क्या इसी कारण इतने दिनोंतक इस हतभागिनीको दर्शन नहीं दिया ? तो दीनबन्धु ! आज क्या मनमें आया जो इस पातकिनीको पाप-पारावारसे उद्धार करनेके लिये सहर्ष अपना अनूप रूप दिखाया ?

कृष्ण—सुनो, तुम्हारे साथ मेरा जो सम्बन्ध है, उस सम्बन्धसे तो तुमने मुझे एक बार भी नहीं बुलाया !

कुन्ती—कृष्ण ! यह तुम्हारे प्रेमकी कंगालिनी तुम्हारे लिये पागलिनी हो रही है। इसके साथ यह छलना छोड़ दो।

पद्मा—कृष्ण ! यदि कलेजा चीर सकती, तो मैं तुम्हें बताती, कि मेरा हृदय तुम्हारे लिये कितना तरस रहा है।

नाम केवल आपहीका जप रही थी आजतक।
यानी इस तपकी जलनमें जल रही थी आजतक।
लौ मेरी आखोंको हरदम आपकी सूरतकी थी।
इस महलमें मोहनी सूरत इसी मोहनकी थी॥

कृष्ण—अरी फूआ! जो कृष्ण तुम्हारे एकबारके पुकारनेसे तुम्हारी सेवामें हाजिर हो सकता है, उसे तुम नाहक इतनी स्तुति क्यों सुना रही है?

(विदुरका प्रवेश)

विदुर—यह क्या पद्मा? यह क्या! बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि जिसके दर्शन लिये तपस्यामें अपने तनको तपाते हैं। वही विदुरकी इस पत्तोकी झोपड़ीमें? अहा!

कैसो रूप अनूप है, अमिय झरत चहुं ओर।
नव जलधर सम लखि बदन, नाचत है मनमोर॥
दृष्टि पड़त मुखचन्द पे, होकर चित्त चकोर।
मोहन राधावर सुघर, सुन्दर 'नन्दकिशोर'॥

कृष्ण—यह देखो फूआ! तो मैं फिर यहाँ न आऊंगा। इस बार जरूर भाग आऊंगा।

विदुर—भागोगे क्यों श्याम? भागोगे क्यों? हां समझ गया, समझ गया। कृष्ण! भागोगे नहीं, तो क्या करोगे? पापीके पास क्योंकर ठहरोगे? अहा! कैसी सुन्दर छटा है! कैसी छवि छिटक रही है! मनको बरवस मोहे लेती है। पैरोंमें नूपुर नाच रहा है, सरपर मयूर पंख

नाच रहा है, गले मे बनमाल्य नाच रहा है और यह सब देखकर मेरा मन भी नाच रहा है। मैं नाचूंगा और अवश्य नाचूंगा।

कृष्ण—सुनती हो फूआ! अब मैं ज़रा भी नहीं ठहरूंगा। अरे भाई! क्या देखकर इस तरह तुम मेरे पीछे पड़ गये हो? मेरे पास तुम्हारा क्या रक्खा है?

विदुर—सब कुछ रक्खा है! बताओ, क्या नहीं रक्खा है। देखने दो श्याम, देखने दो। साधनाके धन, तपस्याके रत्न और आराधनकी वस्तुको अच्छी तरह देखने दो। पद्मा! पद्मा!! इतने दिनोंपर आज हमलोगोंका मनोरथ पूरा हुआ। लाओ, आसन लाओ और प्राणधनको उसपर बिठाओ। प्रभो! बहुत दिनोंपर दीनके ऊपर दया दृष्टि की वृष्टि हुई।

गाना।

राधावर मोहन प्यारे, जय भक्तनके रखवारे ॥राधा०॥
तुम्हीं सबके सिरजनहारे, तन मन धन सर्वस्व हमारे।
जय नट नागर सब गुण आगर, दीन दुखी दुख टारनहारे ॥राधा०॥
है सागर संसार यह, अगम अगाध अपार।
होओ जो कर्णधार तुम, तो नैया होवे पार।
जय जय जय अन्तर्यामी, जय जय हे जग के स्वामी।
'नन्द किशोर' तोहैं प्रणनामी, यशुदानन्द दुलारे ॥राधा०॥

कृष्ण—सन्तुष्ट हूं, सन्तुष्ट हूं।

जिस घड़ीसे तुम हमारे प्रेममें अनुरक्त हो।
हम तुम्हारे भक्त हैं और तुम हमारे भक्त हो॥

(नपथ्यमें—धर्मराज युधिष्ठिरकी जय।)

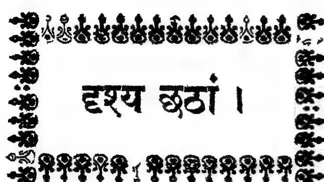
कृष्ण—आज अन्धराज धर्मराज युधिष्ठिरको युवराज बनायेंगे और अपने कर्तव्यसे छुटकारा पाकर, महान् उत्सव मनायेंगे। इसीलिये यह जयजयकार की आवाज़ हो रही है। अच्छा, चलूं मैं भी उस उत्सवमें शामिल होऊं।

पद्मा—अच्छा, तो इस दासीको भूल न जाइयेगा; कभी कभी आकर दर्शन देते रहियेगा।

सब—जय जय श्री आनन्दकन्द कृष्णचन्द्रकी जय!!!

(विदुर और पद्माका हाथ जोड़ना, कुन्ती और कृष्णा का जाना





स्थान—सेठका मकान।

[शान्तिका गाते हुए प्रवेश।]

गाना।

शान्ति— कैसे लिख्यो मेरो भाग हे भगवन्।

मैं अबला सबलन संग पड़िके, बनेउ छुरीतर साग॥
जनकजननि प्रभु! दीन्ह दया लगि, पर तिन बने बन आग॥
वर बूढ़े संग सौंपि दियो मोहि, अपने स्वारथ लाग॥
दरब देखि दिल दया दुरानी, धिक! सन्तति अनुराग।
धिक ब्राह्मण! धिक नाई परिजन! मिलि जारेउ जिन मांग।
धिक समाज! हिन्दुनकर जगमें, धिक जनऊ नवताग॥

अत्याचार! अत्याचार! महा महा अत्याचार! जो आर्य्यजाति जगद्गुरु कहलाती थी, संसारको सभ्यताकी शिक्षा देती थी, उसीके यहां अत्याचार! आचार, विचार सभीका स्वाहा हो गया। दया-धर्मका भाव मिट गया! धनके लिये धर्मका ध्यान न रहा। समाज

पतित हो गया। भला बुरा किसी भी काजमें लाज लिहाज न रहा। स्वार्थके सामने परमार्थका कुछ अर्थ ही न बच रहा। जब कि जब माता पिता, मायामोहको त्याग कर, अपनी प्यारी सन्तानको बेच रहे हैं तब स्वार्थ-परताकी हद हो गयी। हाय रे रुपया! तू धन्य है तेरे लिये अर्थका अनर्थ हो रहा है। प्रेम और प्यारका नाम संसारसे उठ रहा हैं। हाय! सन्तानके लिये जान देनेवाले प्रत्येक मनुष्य लोभमें पड़कर उसे फाँसीकी टिकटिक पर चढ़ा देनेमें तनक भी क्षोभ न लावे। धरती! तू क्यों न उलट-पुलट होजाती? क्या तुझे यह अच्छा लगता है, कि एक माता-पिता, रुपये लेकर अपनी प्यारी कन्याको, अपनी चिरपालित हृत्पिण्डको एक अस्सी वर्षके, नहीं, नहीं, गंरातीमें गरे हुए एक बूढ़े के साथ व्याह करके उसका जीवन नष्ट कर दे? माता वसुन्धरे देख! तूही देख! देखकर इसका न्याय तूही कर।

ऋषिसन्तानो! क्या तुम यही चाहते हो, कि भारतकी पुण्यमयी भूमिमें अबलाओपर अत्याचार हो? निरीह कन्याओंके जीवनपर कुठाराघात हो? उनके करुण रोदनका घर-घर भरमार हो? याद रखो, जहांपर स्त्रीजातिका अपमान होता हैं, वहां साक्षात् भगवान्‌का क्रोध धधक उठता है, और सर्वस्व स्वाहा कर डालता हैं। आज चारो ओर लोग सभी वर्णोंमें बालविवाह, वृद्धविवाह करके लोग



अबलाओंको सता रहे हैं, उनकी आँखोंसे खूनके आँसू बहा रहे हैं। आर्य्यों ! यह आँसू व्यर्थ जानेको नहीं, वरन् एक न एक दिन तुमपर यह आसमान ढाह लायेंगे।

ब्राह्मणो ! आर्य्य जातिकी बागडोर हाथमें थाम्हने-वाले ब्राह्मणो ! उठालो, उठालो, थोड़ा दिन और भी मज़ा उठालो, रुपये कमाकर घट भरलो, मान बढ़ालो, पांव पूजालो, वह दिन अब निकट है कि तुम्हारा, रोमके पोप जैसा, भण्डा फोड़ हो जायगा। तुमने विवाहके टिप्पनोंको मनमाना मिलाकर बहुतसी अबला-ओंको सतानेमें साथ दिया है और हां में हां मिलाकर रुपये पल्ले किया है। तुम्हारे ही मारे कितनी ही अबलाएँ विधवाएँ हो रही हैं, तुम्हारे नाशकी जड़ खोद रही हैं।

स्मृतियोंकी शिक्षाओंकी स्मृति विस्मरण करनेवाले हिन्दु समाज ! अब तू शीघ्रही नष्ट होगा। देख, बाल विध-वाएं सतीत्व त्यागकर वेश्यापनको धारण कर रही हैं, तेरे उज्ज्वल नामपर कारिख लगा रही हैं। अच्छा होता है, ठीक होता है, यह तेरे कियेका फल मिलता है। अब तेरे पतनमें विलम्ब नहीं है। चेत कर।

[सेठजीका लाठीपर टेक देते हुए प्रवेश]

(नैपथ्यकी ओर देखकर)

शान्ति—(स्वयं) आया, वह बूढ़ा ऊँट। इस मूज़ीकी तो सूरत

ही देख कर मेरा जी डर जाता है। बिना दांतके मुँहसे लब लब बोलता है सो तो कुछ बूझ ही नहीं पड़ता है। देखो तो चलता है कैसा अकड़कर, जैसे कि बारह वर्षके छोकड़े हों। मूछोंपर ताव जो फिरता है। जी चाहता है कि मूंछ धर कर उखाड़ डालूं। अच्छा आ, मैं तेरे सामने रहूँगी ही नहीं (जाती है)

सेठज़ी—(स्वगत) क्या मैं बूढ़ा हूं ? नहीं, नहीं, हरगिज़ नहीं। झण्डू फरमसीका माउथ पाउडर लगानेपर भी यदि बूढ़ाही बना रहा तो ·····नहीं, नहीं, मुझे बूढ़ा कौन कहता है ? मैं तो अभी बारह वर्षका छोकड़ा हूं। क्या मेरे जैसा कोई तनकर चल सकता है (अकड़कर चलनेका नाट्य करता है)

(चलतेहुए) यदि मैं बूढ़ा रहता तो हाल ही में एक लह-लहाती यौवनवाली षोडशीसे विवाह ही कैसे करता। वाह रे मैं, कैसा अकड़कर खड़ा होता हूं। (खूब तनकर खड़ा होनेका नाट्य करता है और मूछोंपर ताव देता है यदि इस समय मेरी प्राण प्यारी कहीं देखती,तो खुश होकर मुझसे ऐसे लिपट जाती, जैसे कि लतिका वृक्षमें और अंठेल कुत्तेके शरीरमें, अच्छा पुकारूं तो सही। ओह !

वह तो मेरी आवाज़ पाते ही लपकती, झपकती, चमकती, छमकती दौड़ीदौड़ी चली आयेगी। वह तो मुझे ऐसी वैसी



क्या कहूं, प्यार करती है, जानसे भी बढ़ कर मुझे चाहती है। ऐसा हो भी न क्यों? मुझ सा खूबसूरत (दर्शककी ओर इशारा करके) इन लोगोंमेंसे कोई भी भला है? (पुकारता है) प्यारी शान्ति! ओ प्राण प्यारी शान्ति! सुनती नहीं हो? जरा इधर आओ तो सही।

(नेपथ्यसे आवाज़) रे! कौन दहि जारा यहांपर गल गलाता है? भागता है कि नहीं?

सेठ—(फिर पुकारता है) प्यारी! जरा जल्द आओ; वहां ही से स्वागत मत करो। जरा इधर तो आओ सही।

(नेपथ्यसे पुनः आवाज़) हरामज़ादे, यहांसे जायगा कि नहीं कि आऊं दो-चार झाड़ू लगाऊं। अच्छा ठहर पहुंची।

(हाथमें झाड़ू लिये शान्तिका प्रवेश)

सेठ०—(झाड़ू देख चौंक कर) प्यारी यह क्या? क्यों झाड़ू ही स्वागत करनेका व्यवहार है क्या?

शान्ति—नहीं प्राणनाथ! मुझे मालूम हुआ था, कि कोई बूढ़ा भिखारी दरवाजेपर गलगलाता है। मैं क्या जानती थी कि आप हैं।

सेठ०—मैं तो बूढ़ा नहीं। देखो मैं कैसा बारह वर्षका अलबेला छोकड़ा हूं। मेरे जैसा तनकर और सुडौल होकरके देखो



इतने आदमियोंमेंसे (दर्शकोंकी ओर संकेत करके) कोई भी खड़ा है। किसीकी गर्दन टेढ़ी है तो किसीकी कमर झुकी हुई है। कोई लङ्गड़ा है तो कोई कमज़ोरीसे खड़ा ही नहीं हो सकता। देखो मैं कैसा सीधा खड़ा हूं। (खूब तनकर खड़ा होनेका प्रयत्न करता है)

शान्ति—क्यों नहीं, हैं तो आप केलेके थम्ह जैसे सुडौल लेकिन (कमरपर एक झाड़ू लगाकर) यह काहे टेढ़ है ?

सेठ—प्यारी ! कपड़ेपर गरदा वगैरह पड़ गया है क्या ?

शान्ति—अरे ! गर्दा नहीं है (कमरपर एक मुक्का लगाकर) यह कमर जो टेढ़ी है सो।

(मुक्का लगते मुंह भरे गिरता है और चिल्लाता है)

सेठ—मिसरिया ! मिसरिया !! ओ मिसरिया !!! दौड़ो दौड़ो देखो क्या हो गया।

शान्ति—प्राणनाथ ! क्या हो गया ? गिर क्यों गये ? (उठानेका नाट्य करती है)

सेठ—(स्वगत) अब क्या करूं भगवन्। अब तो मौक़ा बहुत ख़राब हो गया। अगर कोई युक्तिसे इसकी बातका जवाब नहीं देता हूं, तो यह मुझे बूढ़ा समझ बैठेगी और तब बात भी न करेगी। अच्छा, तो मैं कह दूं, कि अचानक कमरमें झुट्ठा समा गया। और ऐसा कहना ठीक भी है। क्योंकि बीमारीकी बात लोगोंसे कह देना आजकलका फैशन होगया है। (प्रगट) प्यारी क्या कहूं, एक अज़ीब



क़िस्मकी बीमारी मेरे बदनमें बहुत दिनोंसे समा गयी है ; जिसके कारण अचानक ज़मीनपर थर्राकर गिर पड़ता हूं। कभी कमर टेढ़ा-मेंढ़ा करके चलना पड़ता है, दांत भी सब हिला करते हैं और साफ-साफ आवाज़ भी मुंहसे नहीं निकलने पाती। बस, यही बात है और कुछ नहीं। प्यारी! यह मत समझो कि मैं बूढ़ा हूं। देखो न भर मुंह अभी दांत है (दाँत दिखाता है)

शान्ति—(स्वगत) मैं जानती हूं और खूब जानती हूं जैसे असली दाँत तुमको हैं। उसी दिन तो १००) खर्च करके पत्थरके दाँत बनवाये हो। तेरी बीमारी भी मैं अच्छी तरह जानती हूं। मर न जाये कि सन्ताप नाश हो जाय। (प्रगट) प्यारे! तो इस बीमारीका इलाज कौन कराते?

सेठ—क्या करूं, हज़ारो हज़ार खर्च किये और सैकड़ों सिविल सर्जन, डाक्टर, वैद्य, हकीम आये, लेकिन किसीसे कुछ न हुआ। कलकत्ता मेडिकल कालेजके खुद प्रिन्सपल साहबने भी बीमारीकी जाँच की और सिवा इतना कहनेके कि ताक़तकी अधिकताके कारण ऐसा हो जाता है और कुछ न कहा। हाँ एक बात उन्होंने और कही कि बहुत थोड़े वर्षोंमें कुछ भी बीमारी नहीं रहेगी।

शान्ति—हाँ, अब मैं समझी।

(स्वगत) प्रिन्सिपल साहबका कहना है कि थोड़े

वर्षोंमें बीमारी छूट जायगी सो तो बहुत ठीक है। अब तो इसकी नाव किनारे लगी ।

(मिसरियाका प्रवेश)

मिस०—मालिक ! क्या आज्ञा होती है ? मैं आगया।

शान्ति—देखो ये गिर गये हैं, इन्हें उठाकर लेजाओ बैठक-खानामे सुलाओ। मैं जाती हूं वहाँ नौरीके मारफत पत्र भेज देने। (जाती है)

(मिसरिया सेठजीको उठाकर लेजाता है)





दृश्य सातवां

स्थान—मन्त्रणा कक्ष ।

(दुर्योधन, दुःशासन और घातकगण खम्भेके पास छिपे खड़े हैं ; शकुनि आता है)

शकुनि—(स्वगत) अब कबतक कालकी प्रतीक्षा करूं ? पितृ-वियोगका दुःख असह्य हो रहा है। मेरे अंग अंगको जला रहा है और मुझे पागल बना रहा है। इसीलिये राज-काज, स्त्री-पुत्र सभीको छोड़कर शकुनि, आज वैर चुकानेकी घात लगा रहा है। वैर साधन। वैर साधन !! यही जप, यही तप, यही साधना, यही सिद्धि। हाय, कैदखानेमें पिता पानी-पानी करके मरे थे। एक बूंद जलके लिये तरस-तरस कर मरे थे। कण्ठ सूख गया था, आँख-की पुतलियाँ ऊपरको उठ गयी थीं। निष्ठुर कलिके अव-तार दुर्योधनने अपने हाथों मेरे भाइयोंका संहार कर डाला था। पिता ! पिता !! वह दिन कब आयगा, जब तुम्हारा पुत्र दुर्योधनसे अपने बापका बदला चुकायेगा। ओह ! अभी एक भी चिनगारी पाऊं, तो उसको फूंक फूंक कर प्रलयकी आग बनाऊं और पलमें सारे कौरवोंको स्वाहा कराऊं।



नहीं, नहीं, दुर्योधन, दुःशासन, वह, घरके खम्भेके पास खड़े हैं। वह इतना सङ्कोचमें क्यों पड़ा है? जान पड़ता है, कि किसी घातमें खड़ा है। अच्छा, चलकर पूछूं तो (प्रगट) अजी— कौन हो तुम लोग?

दुर्योधन—(रोते हुए स्वरमें) कौन? मामा! मामा!! किस वक्त आये? देखो मामा! तुम्हारा दुर्योधन आज वनका भिखारी है।

दुःशासन—मामा! वह दुःखकी कहानी क्या सुनाऊं?

शकुनि—सुनाओगे क्या? सुन चुका हूँ।

दुर्यो०—मामा! जानते हो, हमलोगोंका दुश्मन कौन है?

शकुनि—वैसे तो कुरुपुरीमें कितने ही हैं, किन्तु हाँ, विशेषतः एक है।

दुःशासन—बस, बस, विशेषतः एक है। ठीक कहते हो मामा। सारे अनर्थोंका मूल बस एक बदमाश विदुर है। पहले उसे ही निर्मूल कर देना चाहिये।

शकुनि— हाँ हाँ विदुरके हाथसे तू नामुराद है।
जो कुल फसाद है, वह उसीका फसाद है॥

दुःशासन—तो मामा!

विदुरकी शत्रुताईका अभी मैं फल चखाता हूँ।
कोई हामी हो इससे पहले उसका सिर उड़ाता हूं॥

शकुनि—जरूर, जरूर। यही तो बुद्धिमानी है। शास्त्र कहता है:—



कबहुं राखिये नाह रिपु रुज पावक सर्प-ऋण।
नाश करत छिन मांह, यद्यपि छोटे लख पड़त॥

[दुःशासनका शकुनिके कानमें कुछ कहना]

शकुनि—बहुत ठीक! विदुर अभी यहां आनेवाला है।

दुःशासन—तो बस, अब शिकार कहाँ हाथसे जानेवाला है।

दुर्योधन—मामा! वह बड़ा बकधार्म्मिक है। वह हमलोगों-का अनिष्ट और पाण्डवोका हित चाहता है। हमलोगोंके अपमानके लिये नादानने कितना बड़ा ढकोसला निकाल रखा है। हमारे अन्नको पापका अन्न बतलाकर उसने भिक्षावृत्ति अवलम्बन की है। राजमहलको त्यागकर झोप-ड़ीकी शरण ली है। ओह असह्य! असह्य!! मामा! आने दो, उस बकधार्म्मिकको आने दो। आज सभी आपद सभी विपद्को दूर कर दूंगा, घातकगण! तय्यार रहो! होशियार रहो।

[विदुरका आना।]

विदुर—नारायण! नारायण!

गाना।

तुम्हारो कोइ नहिं पावत पार!!
नारद शारद गुण गण तेरो, गाय गाय गये हार।
नेति नेति कहि वेद बखानत, लीला तेरी अपार॥

घातकगण—मारो, मारो पकड़ो।



विदुर—क्यो ? मेरा कसूर ?

घातक०—हम कसूर फसूर नहीं जानते ।

तुम्हारे खूनसे इस पृथ्वीको मैं रंग दूंगा।
लगी है प्यास दुर्योधनको तो इससे बुझा दूंगा।

विदुर—तो यह सारा दुर्योधनका फसाद है। मैं जान गया उसकी जो मुराद है। मृत्युके मुखमें पड़नेवाले रोगीको दवा अच्छी नहीं लगती ; उसी तरह हमारी उचित बात भी दुर्योधनको अच्छी नहीं जंचती। इसीलिये यह षड़-यन्त्र रचा गया है। तो क्या ?

दुष्टसे मैं भय करूं या भय करूं परमेशसे।
भय नहीं कुछ भी है मुझको धर्मके हित क्लेशसे॥
काट ले गर्दन जो इससे पूरी तेरी आज्ञा हो।
काम वह होगा न मुझसे धर्म जिससे नाश हो॥

घातकगण—तो बस, मरनेके लिये तैयार हो जाओ।

विदुर—तैयार हूं।

भय ही क्या मरनेका जब के आत्मा मरती नहीं।
दुष्ट! इसे तलवार तेरी काट कर सकती नहीं॥
न्यायकी खातिर हमारा सिर सदा तैयार है।
खून जितना है बदनमे धर्मपर बलिहार है॥

घातक०—अच्छा तो—



अब नहीं संसारमें बाकी है तेरा अन्न जल।
छोड़ दे बातें बनाना दुष्ट! अब परलोक चल।

[घातकगणका विदुरको मारनेके लिये तैयार होना]

नैपथ्यमें—सावधान, सावधान, अरे ओ नादान।

[सहसा देवयोंका प्रगट होना और
चारों ओरसे विदुर को
घेर लेना, दुर्योधन,
दुःशासनादिका हक्का
बक्का होना]

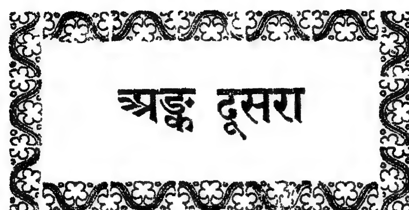
गाना।

मारो, मारो, तेग संवारो ;
मारो काटो ज़ालिमको कर डालो चूर चूर।
पृथ्वीका भार जायगा।
यह अत्याचार जायगा, साधू पै वार जायगा।
दुष्टका नामो निशान मिटे संसारसे
ये अपने किये का पावे फल भरपूर।

[दुर्योधनादिका घबराना बचावके लिये लोगोंको
पुकारना ; वेगसे धृतराष्ट्र, सजय, भीष्म, द्रोण-
का आना, दिखाव]

ड्राप।

——:o:——





यमुना तट।

(कृष्णका वंशी बजातेहुए नज़र आना)

दिगंगनागणका प्रवेश।

पहली—देखो ; कान्ह ! तुम्हारी बंशीने हमलोगोंका घरबार सब छुड़ाया।

दूसरी—हमलोग अभी कहां थी और कहां खींच लाया।

तीसरी—देखो न, किस तरह इसने हमलोगोंका चित्त चुराया।

चौथी- अरी ! यह बांसुरी क्या है, प्रेमकी फांसुरी है।

धन धन बंसुरी बांसकी, धन धन नन्दकिशोर।
चित्त चुरावत सबनके, हरत हृदय बरजोर॥

गाना।

रंग प्रेममें रंगावे मोहन ! तुम्हारी वंशी।
पद प्रेमका सुनावे मोहन ! तुम्हारी वंशी॥



वह तान सुन के मुखसे नर छूट जाय दुखसे।
सुख स्वर्गका दिखावे मोहन! तुम्हारी वंशी॥
श्रुतिमें सुधा बहावे हृद्-तन्त्रियां बजावे।
सुधि बुधि सकल भुलावे मोहन तुम्हारी वंशी॥

कृष्ण०—दिगंगना सखिगण! देखो, मैंने प्रवृत्ति और निवृत्ति पुष्पकी माला गूंथ रक्खी है। संसारके लोग इन्हीं दो पुष्पोंमें विभोर हैं। कोई प्रवृतिका दास है, तो किसी-को निवृतिमें विश्वास है। जिसको निवृत्तिका सहारा है, वह मुझको प्राणोंसे बढ़कर प्यारा है।

गाना

भावके भूखे हैं केवल हम बंधे हैं प्रेममें।
बास मेरा प्रेममें हैं हम न रहते नेममें॥
प्रेमसागरमें मेरे जन डुबकियां खाते हैं जब।
बंशी बजाते तीरपर हम प्रगट होते हैं तब॥
संसारके बन्धनको सकते तोड़ हम पलमें सही।
पर प्रेम-बन्धन तोड़ सकते स्वप्नमें भी हम नहीं॥

(दिगगनाका जाना)

कृष्ण—कौन श्रीमान् विदुरजी।

(विदुरका प्रवेश)

विदुर—अहा! आज मेरा कैसा भाग्य है—कैसा सौभाग्य



है ! जिसके प्रेममें पागल बना फिरता हूं, उसी जीवन धनका आज सुबह ही सुबह दर्शन हुआ। अहा—

मोर मुकेटकी लटकमें, अटकत है मन मोर।
नैननमें राखूं सदा, तोको नन्दकिशोर॥

दीनानाथ ! मैं अथाह समुद्रमें डूब रहा हूं, मेरा हाथ पकड़ो, अपनी कृपाके बन्धनसे इस शरीरको जकड़ो। मैं पागल हो रहा हूं। पद्मा पागलिनी हो रही है। कृष्ण !! हम तुम्हारे वियोगकी वेदनाको सह नहीं सकते। प्रभो ! मनोकामना पुराओ, इस जलती हुई छातीको शीतल कराओ। दयामय ! इच्छा पूरी नहीं करनी थी, तो दर्शन ही क्यों दिया था ? अपना अनूप रूप दिखाकर पागल क्यों किया था ? अच्छा जो हो, अब तो मैंने तुम्हें फिर पा लिया, इस बार छोड़नेका नहीं।

पाके तुमको छोड़ दूं, इतना नहीं नादान हूं।
सामने मुंह मोड़ लूँ, इतना नहीं अज्ञान हूं॥

कृष्ण—प्राणाधार विदुर ! जीवनाधार विदुर !! भला तुम्हारे लिये मुझको क्या अदेय है ? भक्तसे भगवान् हैं। भगवान् नहीं, भक्त ही भगवान्से बड़ा है। इसलिये भक्त, आज भगवान् तुम्हारी कृपाका भिखारी है। विदुर ! पहले तुम मेरी ओर कृपाकी दृष्टि करो, फिर जो तुम कहोगे, वह खुशीके साथ मैं करूंगा।



भक्तके दिलमें हूं रहता भक्त-वत्सल नाम है।
और भक्तोंका सदा मेरे दिलमें विसराम है॥
भक्तका मैं प्राण हू' और भक्त मेरा प्राण है।
भक्तके कल्याण ही से सर्वदा कल्याण हैं।

विदुर—कन्हैया! तुम बड़े खेलैया हो! राईको पर्वतकी पदवी दे रहे हो! यह नाचीज़ विदुर तुम्हारा दास है, तुम्हारे प्रेमका पागल है। इस पागलको क्या पगलपन करना होगा, कहो?

कृष्ण—कहू' क्या? तुमसे क्या छिपा है? विदुर! क्या तुम जानते नहीं, कि अहकारी दांभिक दुर्योधन रूपी कलि किस प्रकार ससारमें आकर जन्म ग्रहण किया है। विदुर! पापिष्ठ दुर्योधन ऐश्वर्यके गर्वमें चूर होकर इस तरह अन्धा बन बैठा है, कि वह मेरे अस्तित्व तकको स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं। ऐश्वर्य बलसे संसार हार मानता है—दीन हीन पैरों तले कुचला जाता है। इस मोहमें पड़कर वह अपने अमूल्य धर्म तत्वको ठुकराता है। पांडवोंको पितृहीन, सहायहीन, धनहीन समझकर दुर्योधन अपना ऐश्वर्य विस्तार करनेके लिये तैयार हुआ है, विदुर! मैं ऐश्वर्यका भिखारी नहीं— भिखारी हूं भक्तिका। भिखारी हू' धर्मका। इसीलिये, विदुर! मैं भी इस अहङ्कारी अभिमानी दुर्योधनको दिखा देना चाहता हू', कि धनबल, ऐश्वर्यबल, तृष्णासे भी तुच्छ है, तुच्छसे भी तुच्छ है। इस पृथ्वी



पर धर्मबलसे बढ़कर दूसरा कोई बल नहीं है। विदुर! जिस धनको प्राप्त करनेके लिये आज तुम राज-महलको छोड़कर झोपड़ीमें निवास करते हो, राजपुरीके ऐश्वर्यको लात मारकर वनके भिखारी हुए हो, , मैं भी उसी धनका भिखारी हूं।

विदुर—तो आओ, एक बार हृदयसे लग जाओ। ऐ हृदय-पिञ्जरके सुन्दर पक्षी। आओ, एकबार हृदयके पिञ्जरेमें बैठ जाओ। आओ कृष्ण! आओ।

रंग रहा है मन मेरा मोहन तुम्हारे रंगमें।
बनके अब एकसा तुम रह जाव मेरे संगमें।

कृष्ण—(आलिंगन करके) आओ विदुर! आओ। महासागर-के पानीको महासागरमें मिला देनेके लिये आओ, मैं कौन हूं? विदुर हूं। भक्तका नाम मेरा नाम है; भक्तका रूप मेरा रूप है। जाओ प्राणभक्त! तुम भगवान्के स्वरूप हो, भगवान्का काम पूरा करनेके लिये जाओ। कुटिल, कुचाली और अधर्मीके विरुद्ध धर्मका शस्त्र लेकर खड़े होने-के लिये जाओ, जानते हो कि दुरात्मा दुर्योधनने पापा पुरोचनको किस लिये बारणावत भेजा है? वह देखो, इस सुनसान स्थानमें नादान मन्त्रणा करनेके लिये आ रहा हैं। हमलोग एक तरफ छिप जायें। जिससे कि इन पापियोंकी बातचीत सुन पायें।

(दुर्योधन और पुरोचन का प्रवेश)



पुरोचन—कु—कु—कु—कुरु—ना--ना—थ, तो—तो—तो वंस—कटांग—कटांग—कट।

दुर्योधन—हां भाई पुरोचन! तभी मैं समझूंगा कि तुम मेरे सच्चे मित्र हो। पांडवोंके रहते यह राजा दुर्योधन रंकका भी रंक है।

करो तुम काम कुछ ऐसा यह आफ़त सिरसे टलजाये।
कि आये पांडवोंकी मौत और कांटा निकल जाये॥

पुरोचन—(हंस कर) मि—मि—मित्र! सो—सो—जानता हूं। इ—इ—इसी—लिये तो—सो—सो—सोच—वि—वि—विचार कर लिया है। ब—ब—बस। खट—खट पटा—पट।

दुर्योधन—तुम्हारे मुंहमें घिव शक्कर। तो भाई! तुम पांडवोंके लिये ऐसा लाक्षागृह तैयार करो, जो उसको किसी प्रकार लाक्षाका बना हुआ समझ न पड़े।

पुरोचन—अ—अच्छा, अ—अ—आप—जल्द—स—स—साम-ग्री--का—ब—ब—बन्दोवस्त कीजिये।

दुर्योधन—भाई! तुम यहीं से रवाना हो जाओ। मैं अभी जाकर पीछेसे सब ज़रूरी चीज़ें भेजता हूं।

पुरोचन—ब—ब—बहुत—अ—अ—अच्छा। ह---ह---हम जाते हैं। पु—पु·· पुरोचनने ··कितनेको ख---ख---खाया है। इ---इ---इस बार---पा---पांडवोंपर---दाव लगाया है।

[जाना]



दुर्योधन—क्या करूं ? मेरे सब किये-दियेको तो विदुर मिट्टी-में मिला देता है। एक इसी दुरात्माके कारण पिताके आगे मेरी एक भी नहीं चलती। सारे अनर्थोंकी जड़ एक वही बदमाश विदुर है।

[जाना]

कृष्ण—विदुरजी, सुना ?

विदुर—हां सुना।

कृष्ण—क्या सुना ?

विदुर—जो कुछ कि आपने सुना।

कृष्ण—तो धर्मवीर ! फिर चुप क्यों हो ?

विदुर—कार्यनियन्ता ! कार्यमें प्रवृत्ति दो।

कृष्ण—जाओ विदुर ! धार्मिकोंके प्राणोंकी रक्षाके लिये मैं तुम्हें वह प्रवृत्ति दान करता हूं। जाओ विदुर ! धर्म,बुद्धि-कौशल-से दीन-हीन धर्मके आश्रयमें आये हुए पंच पांडवोंकी प्राणरक्षाके लिये जाओ। ओह, लाक्षागृह ! लाक्षागृहमें पांडवोंके जलानेकी मन्त्रणा ! ऐसे षड्यन्त्रकी रचना ! जाओ धर्मवीर ! दुरात्माओंके कूट कौशलको भेदकर, धर्म-की जय घोषणा करनेके लिये जाओ। संसारमें धर्मकी विजय पताका फहरानेके लिये जाओ। (जाना)

विदुर—गये, भगवान् गये। एक क्षुद्र तृणको आज महावृक्ष-का भार सुपुर्द कर गये। जाओ भगवन् ! जाओ। तुम्हारी जिस कृपाके बलसे पंगु भी ऊंचेसे ऊंचे पर्वतपर चढ़नेमें



समर्थ होता है, उसी कृपाके बलसे एक एक तृण महावृक्ष-की शक्ति क्यों न धारण करेगा ?

गाना ।

प्रभु ! तव लीला अपरम्पार ।
शेष शारद गाय थाके पाये नहि कोइ पार ॥ प्रभु० ॥
तव कृपा लवलेश ते सब सुलभ यहि संसार ।
पंगु पद लह अन्ध लोचन पुत्र बन्धया नार ॥ प्रभु०॥

[जाना]



दृश्य दूसरा

स्थान—सरोवरका किनारा।

[अलबेलानन्दका अपने अन्य दो साथियोंके साथ प्रवेश।]

अलबेलानन्द—कहो जी टंकोरदास! सन्तोंके ठहरनेके लिये यह क्या ही अच्छी जगह है।

टंको०—रामजीके आसरेसे बिलकुल ठीक है।

ढो०—ठीक ही नहीं, परम उपयुक्त है।

महा०—क्योंकि यह स्थान सब सामानोंसे युक्त है।

टंको—रामजीके आसरेसे बिलकुल ठीक है।

ढो०—यहाँपर लोगोंका जमघट लगा रहता है।

महा०—नरनारी सबका समागम रहता है।

ढो०—क्या बड़े-बड़े घरकी ललनाएं भी यहाँपर आती हैं?

महा०—हाँ, आकर टहलती हैं, फिरती हैं।

टंको—रामजीके आसरेसे, छमकती हैं, झमकती हैं।

ढो०—ओह! तब तो खूब मज़ा आयेगा। यहाँ ही ठहरिये;

महा०—बस, यहां ही धूनि रमाओ। भर-भर थाल मधुर और पकवान यहाँ आयेगा। खाते-खाते मन ऊब जायेगा।

ढो०—तब तो खूब मज़ा आयेगा?

टंको०—बिलकुल ठीक। रामजीके आसरेसे साधु होनेका फल मिल जायेगा।



सब—(एक साथ ही कहते हुए बैठते हैं) हरे, हरे, हरे।

महा०—ढोंढाईदास ! एक दम तैयार तो करो, बड़ी थकावट आगई है ! (झोरीसे गांजा निकालकर बनाता है)

टंको०—महाराज ! मुझको तो दम लगाये बिना एक क्षण भी नहीं रहा जाता, रामजीके आसरेसे !

महा०—अरे ! गांजा तो लोगोंको गाजी मर्द बना देता है।

टंको—लेकिन रामजीके आसरेसे, इसमें आर्य्य समाजी लोग दोष बताते हैं और गांजा भक्तोंको बहुत कोसते हैं !

महा०—समाजियोंकी सुनता कौन है ? वह तो पाजी हैं।

टंको० जब काजीसे उनको, रामजीके आसरेसे, काम पड़ आयेगा, तब उनकी सारी गुण्डेबाजी घुसर जायेगी।

(ढोंढाईदास गांजा भरकर चिलम देता है ; महाराजजी दम लगाकर टंकोरदासको देता है और टंकोर ढोढ़ाईदासके हाथमें देता है)

टंको०—(मुँह आकाशकी ओर करके धूआं फेंकता है) रामजीके आसरेसे अब दममें दम आया।

महा०—मेरे शरीरमें बल चला आया।

टंको०—(नेपथ्यकी ओरसे आती हुई एक नव युवती नारीको देखकर) महाराजजी ! देखिये तो सही यह कैसी, हठीली छबीली नारी गागर लिये जल भरनेको चली आ रही है।

महा०— (स्वगत) कैसी छमछमाहट है, कैसी चमचमाहट है। पेजनकी आहट पाते ही दिल दहल रहा है। (प्रगट)



अच्छा आने दो। राग भोगके लिये कुछ उद्योग करना चाहिये।

ढो०—आज्ञा दीजिये, जल्द जाकर कुछ ख़रीद लाऊं।

महा०—ठहरो, मूर्ख कहींका। यहांपर आकर पैसा खर्च किया जायेगा?

ढों—तब पैसे कहांसे बरस जायेगा।

महा०—बेशक बरस जायेगा।

टंको०—रामजीके आसरेसे तब तो बिलकुल ठीक हो जायेगा।

महा०—देखो, मैं ध्यान लगानेका बहाना करता हूं और तुम-लोग मजेसे हरिकीर्त्तन करना आरम्भ करो। कोई आवे, कोई जाये, उसपर मुख़ातिब मत हो। आने दो, दण्डवत् प्रणाम करने दो। यदि कोई मेरी ओर आवे, तो उसको डराकर कहो, कि "हां हां, वहां अभी मत जाना, महा-राजजी ध्यानमें हैं। कहीं बेवक्त ध्यान टूट जायेगा, तब तू जर छार हो जायेगा।" बस, देखो क्या तमाशा होता है। लेकिन एक बात कहना, कि जब कोई विशेष आग्रह करे, तो मुनासिब तौरसे बातचीत करना।

(ध्यान लीन होनेका नाट्य करता है और टंकोरदास तथा ढोंढाई गाने लगते है)

गजल

(लय नौटकीकी)

भजो मनमूढ़ मनमोहन, मुरारी बनविहारीको ॥ टेक ॥
जपो जगदीश जनरञ्जन, नमो रघुवर खरारीको ॥



रटो हरि-नामको हरदम, सदा श्रीकृष्णको रटना।
जपो परब्रह्म परमेश्वर, सदा खल दुष्टहारीको ॥
निरन्तर रामपद रटना, वही विष्णु अनामय है।
वही जगन्नाथ जगजीवन, वही हरता मुरारीको ॥

[दोनों पद्मासन लगाकर ध्यान लीन होनेका नाट्य करते हैं]

युवती—(साधुओंको ध्यानमग्न होते देखकर आप ही आप) अहा! क्या ही सौम्य रूप है! कैसे ध्यानमें लीन हैं! हो न हो, ये लोग जङ्गलकी ओटसे उतरे हैं? सिद्धता तो इनकी कान्तिसे ही झलकती है। अच्छा हुआ, कि मैं यहांपर इस समय आ पहुंची। दर्श हुआ, दुःख दूर हुआ। खैर महात्माओंके चरण-कमलमें दण्डवत् भी तो बजा लूं, जन्म सफल कर लूं। (दण्डवत् करती है) महाराज! दण्डवत्। (किसीके भी मुखसे उत्तर न पाकर) कदाचित् यह गहरे ध्यानमें मग्न हो रहे हैं। खैर, एक बार फिर भी तो दण्डवत् करूं, शायद कुछ आशीर्वाद मिल जाये। (दण्डवत् करती है) महाराज! दण्डवत्।

टंकोरदास—(ध्यान टूटनेका नाट्य करता हुआ) कौन है?

युवती—सरकार! मैं हूं साधुओंकी चरणरेणु चम्पा। सेठ झावरमलजीकी बांदी हूं।

टंको०—सौभाग्यवती हो।

चम्पा—(स्वगत) एक जनेसे तो अशीष मिला। दूसरेसे भी

तो आशीष ले लूं सही। (हटकर अलबेलानन्दके पास जाती है।)

टंको०—(ललकारकर) हाँ, हाँ, रामजीके आसरेसे उधर मत जा। महाराजजीका ध्यान ऐसा-वैसा नहीं है। अगर कहीं असमय ही ध्यान टूटा, तो बस समझ जा, जलकर छार हो जाओगी। वह क्या ऐसे वैसे महात्मा हैं रामजी? वह सदा आठो पहर, बस ध्यान हीमें रहा करते हैं। राग भोग वे कुछ करते नहीं, केवल वायु आहार करके रहते हैं रामजी। इनका दर्शन दुर्लभ है। बड़े-बड़े राजा-महाराजा लोग महीनों डेरा डालकर बैठते हैं रामजी, तो कहीं उन्हें दो-चार बातें करनेका मौका मिलता है रामजी।

चम्पा—(स्वगत) तब तो बेशक मेरा अनुमान ठीक निकला। यह भारी महात्मा हैं। इसमें सन्देह नहीं। (प्रगट) तो क्या सरकार! यह कभी ज़रा मेरी ओर दृष्टि भी न फेर सकेंगे?

टंको०—अगर तुम्हारा भाग्य उदय होगा, तो हो सकता है। अभी कुछ देर ठहर जाओ, कदाचित् ध्यानसे जाग जायें।

[थोड़ी देर ठहरकर 'हरे-हरे' करते हुए महाराजजीका ध्यानसे जागना]

चम्पा०—महाराज ऋषिराजको दासीका दण्डवत्।

महाराज—तू कौन?

टं०—महाराज! रामजीके आसरेसे यह सेठ झावरमलजीकी बाँदी है। सरकारकी कृपा-दृष्टिकी अभिलाषिणी बड़ी



देरोंसे यहां ठहरी हुई है! इसका शुभ नाम चम्पा है, रामजीके आसरे से।

महा०—अच्छा, सौभाग्यवती हो। चम्पा! तू बड़ी साधुसेविका है। परमात्मा तुझपर बड़े खुश हैं।

टं०—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे। यह बड़ी भाग्यवती पुण्यवती ललना है।

महा०—बूझ पड़ता है-जैसा कि मैंने ध्यानमें अभी देखा है-इसकी मालकिनी भी बड़ी सन्त भक्त है।

टंकोर—बिलकुल ठीक, रामजीके आसरेसे।

चम्पा—यह सब आप जैसे महात्मा लोगोंकी कृपा है।

महा०—ध्यानसे मुझे मालूम पड़ता है कि तुम्हारी मालकिनी कुछ उदास रहा करती हैं।

चम्पा—सरकार उदासीकी बात मत पूछें, वे तो दम बदम रोया करती हैं!

महा०—ध्यानसे यह भी मालूम पड़ता है, कि उनको पुत्र नहीं है।

चम्पा—महाराज! बिलकुल ठीक है। अभी तो हाल ही उनकी शादी हुई है।

महा०—हां, एक बात और ध्यानसे बूझ पड़ता है, कि उनको, पति-पत्नीमें प्रेम नहीं रहता और इन्हीं कारणोंसे वह उदास रहा करती हैं।

चम्पा—महाराज! आप अवश्य अन्तर्यामी महात्मा मालूम



पड़ रहे हैं। यह सब कुछ सत्य है। मेरे मालिक झाबरमलजी तो अस्सी वर्षके बूढ़े हैं और उनकी नवविवाहिता पत्नी अभी केवल षोड़शी है; किशोरी है। भला दोनोंमें प्रेम कैसे हो?

महा०—(स्वगत) तब तो मामला ठीक हैं। अरे भाग्य! अब तूही जाने।

चम्पा—महाराज! मेरी मालकिनी बड़ी साधुसेविका है। कृपाकरके उन्हें ऐसा आशीष देते कि उनका अहवत बन रहे।

महा०—भला यह कैसे हो सकता है, कि जिसका वर अस्सी वर्षका बूढ़ा हो, वह चिर अहवाती बनी रहे? यह कैसे हो सकता है?

चम्पा—सरकारकी कृपासे सब कुछ सम्भव है। साधु चाहें तो समुद्र सूख जाये, सूर्य प्रभाहीन हो जाये, चन्द्रमासे आगकी धारा बह चले, पहाड़ टूट-टूटकर गिर पड़े और ऐसा हुआ भी है।

टंकोर—महाराज! रामजीके आसरेसे आपकी कृपा कटाक्ष ही काफी है, रामजीके आसरेसे। कितने राजे-महाराजे, सेठ-साहूकारे रामजीके आसरेसे, वकील-मुख़तार, हाकिम-हुक्काम, रामजीके आसरेसे आपके पास आये, रामजीके आसरेसे, और मनोवाञ्छित फल पाये रामजीके आसरेसे। किसीको पुत्र हुआ, किसीको धन हुआ, रामजीके आसरेसे, किसको क्या नहीं हुआ रामजीके आसरेसे?



किसीने युद्ध विजय किया रामजीके आसरेसे, किसीने मुकद्दमा जीता रामजीके आसरेसे, फिर एक साधुसेविका ग़रीब स्त्रीका अहवात, आप चाहेंगे तो क्यों न रह सकता है ?

ढो०—(स्वगत) ओह ! मारे भूखके तो पीठ-पेट एक हो-गया। नस-नस दूहा जाता है। एक तो सफरका मारा और दूसरा इस वक़्तक एक दानासे भी भेंट नहीं और यह लोग चले जाते हैं बातपर बात बढ़ाते। होगा जायगा तो कुछ नहीं, सिर्फ एक मज़ाक। मज़ाक भी पेट ही भरे रहनेपर अच्छी लगती है। असल बातपर आजाते और थोड़ासा साग-सत्तूका अर्ज़ लगा देते। (प्रगट) बहन ! घर जाकर थोड़ा कुछ भोजनका इन्तजाम करके लादो, बड़ी भूख लगी है, साधु भोजनका फल तुमको भगवान् देगा।

टंकोर—बिलकुल बेठीक रामजीके आसरेसे। देखो बहन ! खाने-पीनेका इन्तजाम मत करना, रामजीके आसरेसे। स्वयं आकाशवृत्ति यहां पहुंचती है, रामजीके आसरेसे। हम-लोगोंको एक जड़ी-बूटी काफ़ी हैं रामजीके आसरेसे, खाइये और भूख विदा हो जाती है, रामजीके आसरेसे।

महा०—(क्रोधित स्वरसे) मेरा चेला नहीं है चेला है। पेटू कहींका ? केवल खांव-खांव किये रहता है। अच्छा, चम्पा ! यदि अब मैं तेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं करता हूं तो तू कहेगी, कि ये लोग केवल ढोंग पसारे हुए हैं। मैं



उसे सदा अहवाती होनेके लिये आशीष देता हूं। लेकिन इसके लिये कुछ पूजा प्रतिष्ठा करनेको जरूरत नहीं। जाओ।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे।

चम्पा—सेवकका आग्रह तो मानना ही होगा।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे। जाओ जल्द जाओ। हमलोगोंका समय ख़राब हो रहा है; क्योंकि हमलोग आठो पहर चौबीसों घण्टा ध्यान हीमें लगे रहते हैं।

महा०—(कुछ डांटनेका नाट्य करके) यह क्या कर रहे हो टंकोरदास? योगकी गुप्त बात भी किसीको कही जाती है?

टंकोर—बिलकुल बेठीक होगया रामजीके आसरेसे। मैं यह बात भूल गया था रामजीके आसरेसे।

चम्पा—(स्वगत) क्या ही महात्मा हैं। कैसे स्वार्थत्यागी हैं! अहा! साक्षात् देवस्वरूप हैं! इन्हें अवश्य पूजन अर्चन करना चाहिये, उत्तम-उत्तम पदार्थोंका भोग लगवाना चाहिये। ऐसे साधु मिलते कहां हैं? किसीसे यह कुछ तो मांगते ही नहीं। चेलेने ज़रासा भोजनकी बात कही और उसपर डपट पड़े। अच्छा, जाती हूं और इनके भी रागभोगका प्रबन्ध करती हुई अपनी मालकिनीको भी इनका शुभ दर्शन कराती हूं। (प्रगट) अच्छा महाराज! दण्डवत् लीजिये, मैं जाती हूं। (जाती है)



महा०—क्यों जी टंकोरदास ! अच्छा खरादपर चढ़ाया । किस प्रकार उसको झमेलेमें ला डाला है ।

टंकोर—थोड़ासा ढोंढाई भगतने रामजीके आसरेसे बिगाड़ दिया है ।

महा०—लेकिन उसको तो मैंने किस चातुरीसे ठीक कर दिया ।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे ।

महा०—अच्छा, सब फिर ध्यानमें लग जाओ । देखो वह चिड़िया मधुर मिठाईसे भरा थार शीघ्र लाती है ।

[सब ध्यानमें मग्न होते हैं। थोड़ी देर बाद चम्पाका थारमें पकवान इत्यादि लिये प्रवेश]

चम्पा—(साधुओंको ध्यानावस्थित देखकर) ये लोग कैसे महान् साधु हैं । सदा ध्यान हीमें रहा करते हैं । खाने-पीनेकी कुछ भी परवाह नहीं । कौन कहां जाता है, क्या करता है, इसका इन्हें ज़रा भी ग़म नहीं । खैर, दण्डवत् करती हूं, कहीं ध्यानसे ये लोग जाग उठें ।

[थाल आगे रखकर दण्डवत् करती है]

ढों०—बहन थालमें क्या लाई है ?

चम्पा—महाराज ! कुछ नहीं, जो कुछ साग-सत्तू मिला है, मालकिनीने पठाया है ।

ढों०—तो क्या— — —

महा०—(ध्यान टूटनेका नाट्य करता है) हरे, हरे, हरे त्वमेव माता च पिता त्वमेव ।



टंकोर—(आंख खोलते हुए) नारायण श्रीगोविन्द हरे।

तीनों—हरे, हरे, हरे, हरे।

चम्पा—सरकारको दण्डवत्।

महा०—शुभ हो, शुभ हो चम्पा! कहो किधर चली? पानी वगैरह लाना था क्या?

चम्पा—नहीं महाराज! मालकिनीने भोगके लिये साग-सत्तू जो कुछ जुटा मिला है, भेजा है।

टंकोर—बिलकुल बेठीक रामजीके आसरेसे। तुमको तो भोजन-की वस्तु वगैरह रामजीके आसरेसे, लानेको मना न कर दिया गया था रामजीके आसरेसे?

महा०—लेजा यहांसे थाल। हमलोग क्या स्त्रियोंके हाथका बनाया कभी पाते हैं?

चम्पा—सरकार! यदि स्त्रीको साधुसेवाका अनुराग हो, तो वह किस प्रकार अपनी अभिलाषा पूर्ण कर सकती है?

महा०—इसका ठेका हमलोग नहीं लिये हुए हैं।

चम्पा—महाराज! यह प्रार्थना मञ्जूर करनी पड़ेगी।

ढो०—(स्वगत) थालकी मिठाईकी सुन्दरताई देख-देखकर तो मेरी जीभसे लार टपकी पड़ती है और ये लोग नाहक ही गलथोंथों मचा रहे हैं। वह भी जब कि देनेवाली प्रार्थनापर प्रार्थना कर रही है। अच्छा, यह लोग न लेंगे, तब मैं तो विना खाये छोड़ूंगा नहीं। मेरा ब्रह्म तो तेज हो रहा है।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे, महाराज! रामजीके



आसरेसे, सब स्त्रियोंका नहीं ; चूं कि यह बड़ी साधु भक्त बूझ पड़ती है रामजीके आसरेसे, इसीलिये इसका प्रेम भोजन अपना लेना चाहिये रामजीके आसरेसे। रामचन्द्रने भी अछूत सेवरीका जूठा बैर सप्रेम ग्रहण किया था रामजीके आसरेसे।

महा०—एवमस्तु। ढोढ़ाईदास रखलो थाल! क्या किया जाय भक्तके प्रेमको कैसे तोड़ा जाय।

चम्पा—ऋषिराज! एक विनय और है। आशा है उसे नामंजूर न करेंगे।

महा०—कहो, कहो, क्या कहना है।

चम्पा—सरकारका शुभ दर्शन मेरी मालकिनीजी करना चाहती हैं ; अतएव कृपा करके उनके दरवाज़े को पवित्र कीजिये।

महा०—(स्वगत) मामला तो रङ्गपर चढ़ा चला आता है, अब धन-धर्म्म दोनों बनना चाहता है। (प्रगट) हमलोग गांवोंमें नहीं जाते। हमलोग केवल धरतीके ऊपर और आकाशके नीचे विचरा करते हैं।

चम्पा—सरकार! नामंजूरीकी तो कोई :बात ही न होनी चाहिये!

महा०—(क्रोधित स्वरसे) तू तो बड़ी हठीली मालूम पड़ती है? क्या तेरी मालकिनीके लिये मैं अपना व्रत भङ्ग कर-दूं? उठा थाल लेजा। साधुओंके साथ ज़िद्द?

ढो०—(स्वगत कपार ठोककर) हाय रे करम! आया हुआ



भरा थाल सामनेसे जा रहा है। मुझको घट लगा ही रहा। महाराजजी! महाराज नहीं चण्डाल हैं।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे। सेवक सतीकी बात रामजीके आसरेसे सन्तोंको माननी ही पड़ती है रामजीके आसरेसे। कृष्णजीको बंशी छोड़कर रामजीके आसरेसे, तुलसीदासकी प्रार्थनापर धनुष वाण धारण करना ही पड़ा रामजीके आसरेसे।

महा०—अच्छा जाओ चम्पा! मैं तुझसे लाचार हूं। दिनको तो नहीं आसकूंगा, क्योंकि जहां यहांसे निकलूंगा, कि लोग घेर लेंगे। इसलिये कल सन्ध्यावन्दनसे निपटनेपर कुछ रात बीते सेठजीके दरवाज़ेपर आजाऊंगा। तू वहां खड़ी रहना और झट वहांसे लौट आऊंगा।

चम्पा—बहुत अच्छा महाराज! दण्डवत् लीजिये जाती हूं।

महा०—अच्छा जाओ, लेकिन यह संवाद किसीको कहना मत, नहीं तो ठीक न होगा।

चम्पा—बहुत अच्छा महाराज!

[जाती है]

महा०—ढोंढ़ाईदास उठाओ सब कुछ बांधो। आगे चलकर पाया जायगा। दो-चार जगह धूमधाम करनी चाहिये।

टंकोर—बहुत ठीक रामजीके आसरेसे।

ढों०—सो तो न होगा। यहां तो भूखे पेटमें सियार कूद रहा



है। बिना खाये तो नहीं चलूंगा। भूखों मरनेके लिये तो साधु नहीं हुआ हूं।

महा०—अजी तुम बड़े पेटू मालूम पड़ रहे हो। खाना कहीं भागा जाता है? चलो न कूपपर खालेना।

टंकोर—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे। बड़ा पेटू साधु है रामजीके आसरेसे।

ढों०—(धीमे स्वरसे) अच्छा चलिये, मरही न जाऊंगा और क्या होगा।

(मिठाई वगैरह झोरा मन्तरा लेकर सब जाते हैं)



दृश्य तीसरा।

स्थान—रास्ता।

[दुःशासन और शकुनिका प्रवेश।]

दु,शासन—मामा! पौ बारह।

शकुनि—कैसे ?

दु·शासन—अजी, वंही, वंही पाण्डव जा :रहा है।

शकुनि—जाने दो, वहीं सबका काम तमाम हो जायगा।

दुःशासन—हां मामा! पुरोचनने सबके श्राद्धका इन्तजाम कर रक्खा है।

शकुनि—अरे चुप; देख वह आरहा है।

दुःशा०—ऐं, ऐं, अरे बाप! वह तो भीम दिखा रहा है। मामा! मामा !! चलो, भाग चलो, भीमको देखते ही हमारा सारा होश-हवास गुम हो जाता है।

[दोनोंका वेगसे जाना]

(कुन्तीके साथ पंचपाण्डवोंका प्रवेश)

भीम—देखो अर्जुन! हमारी बात तो तुमको भी पसन्द नहीं; किन्तु क्या तुम जानते हो, कि आज कुरुपुरीमें इतना आनन्द क्यों मच रहा है ?



कुन्ती—बेटा ! मनाने दो, कौरवोंको आनन्द मनाने दो, इसमें तुम्हारा क्या बिगड़ता है ? चलो, जो ईश्वरकी इच्छा होगी, वही होगा ।

होइ हैं सोई जो राम रचि राखा ।
को करि तर्क बढ़ावहि शाखा ॥

अर्जुन—भाई ! क्या करोगे ? हमलोगोंके कष्टसे यदि कौरवोंको आनन्द हो, तो हमलोगोंको कष्ट ही रहे ।

गर पांडवोंके दुःखसे इन कौरवोंको सुक हो ।
परवा नहीं है इसकी गर पांडवोंको दुःख हो ॥

भीम—भाई ! अभी हमारा हृदय उतना उच्च नहीं हुआ है ।

हमको हो दुःख और दूसरेको सुख ! क्या कहना है ?
भाई ! माफ करो । हमको नहीं यह मत गहना है ।

युधिष्ठिर—भाई भीम ! चलते समय तो हमलोगोंने सबका दर्शन किया ; किन्तु पूजनीय महात्मा विदुरजीका दर्शन नहीं किया । वे अपने मनमें क्या कहते होंगे ?

भीम—भाई ! नादान दुर्योधनने तो इस अपमानके साथ हमलोगोंको विदा-दान किया, कि उस वक्त विदुर तो विदुर ही ठहरे, इस्टदेवतातकका ध्यान नहीं रह सकता ।

युधि०—हाय !

इन कौरवोंकी आंखमें अवश्य पड़ी है धूल ।
तब तो अपने मित्रको समझे हैं त्रिशूल ॥

किन्तु भाई भीम! क्या किया जाय?

भीम—क्या किया जाय? आप ही कहिये इस नीचके अधीन कबतक रहा जाय? कबतक यह अनादर और अपमान सहा जाय। जिसकी बात-बातमें छल और कपट है, जिसके पद-पद्में आपद् और विपद है, जिसकी रग-रगमें हमलोगोंके प्रति वैर भाव भरा हुआ है। भाई! उससे आशानुरूप फल पानेकी कब प्रत्याशा की जा सकती है?

युधि०—सब समझता हूं! भाई, सब समझता हूं। महाराज अन्धराज भी उन लोगोंको धन, जन, सैन्य बलसे भरपूर किये जा रहे हैं और हमलोगोंको अपने हक़से भी दूर किये जा रहे हैं।

भीम—भाई! याद रक्खें, बिना खून-खराबी मचाये हमलोग अपने पिताका राज्य हरगिज़ प्राप्त नहीं कर सकते।

युधि०—भाई वृकोदर! तुम्हारा कहना ठीक है; किन्तु उसके लिये कालकी अपेक्षा करना ज़रूरी है। शास्त्रकार धैर्यको ही विपत्तिसे उद्धार पानेका एकमात्र आधार बताते हैं। जल्दबाज़ीसे सारा काम बिगड़ जाता है। एक तो हमलोग पितृहीन हैं ही; दूसरे सहायहीन भी हैं। इस हीनावस्थामें हमलोग प्रबल शत्रुके आगे किस प्रकार तलवार उठा सकेंगे?

भीम—ओह; सहा नहीं जाता। भाई! सहा नहीं जाता। हाय!



सह रहा हूं दुःख यह किस पहले जन्मके पापसे।
मौत आ जाती तो बचते इस कठिन सन्तापसे॥

भाई! माना, कि हम पितृहीन हैं—सहायहीन हैं—तो क्या इसलिये हमको अधर्मका पदाघात सहना पड़ेगा? शत्रु के आगे सर झुकाना पड़ेगा? हृदयके उबलते हुए खूनको ठण्डा करना पड़ेगा? क्या भीम क्षत्रिय नहीं? क्या भीमके हाथमें तलवार उठानेकी ताकत नहीं? भाई! रहने दो, अपना धैर्य रहने दो। मुझे मरनेका डर नहीं। मैं इतना कायर नहीं। सारा संसार एक तरफ हो जाय, भीम अकेला ही रहेगा, किन्तु किसीका अपमान नहीं सहेगा, किसीके आगे सर नहीं झुकायेगा। भाई! आप हमको नालायक समझकर छोड़ दें, हमसे सारा नेह-नाता तोड़ दें, मैं सुखी होऊंगा, किन्तु कुटिल दुर्योधनकी कुमन्त्रणाका फल हरगिज़ नहीं भोगूंगा। मैं वारणावत नहीं जाऊंगा। चाहें जो हो, मैं नहीं जाऊंगा। भीम मरनेसे डरता नहीं; वह मरनेके लिये तैयार है; किन्तु शत्रु का संहार करके, शत्रु की गर्दनपर तलवार वार करके।

कुन्ती—तो क्या भीम, तुम अपने बड़े भाईकी आज्ञाके विरुद्ध चलना चाहते हो?

भीम—मां! भीम इस समय निस्तेज है। तुमलोगोंके हाथकी कठपुतली है; जिधर चाहो उधर घुमालो।

युधि०—भाई भीम! शान्त हो, शान्त हो। समयकी प्रतीक्षा



करो। सारा काम समयानुसार ही होता है। अहा! यह तो विदुरजी खुद ही इस तरफ आ रहे हैं।

[विदुरका प्रवेश]

विदुर—वत्स! हस्तिनापुरको त्यागकर जाते हो? जाओ धर्म्मकी जय घोषणा करनेके लिये जाओ, धर्म्मकी विजय पताका फहरानेके लिये जाओ।

अलोहं निशितं शस्त्रं शरीरपरिकर्तनम्।
यो वेत्तु नतु त्वं घ्नन्ति प्रतिघाता विदं द्विषः॥
कक्षघ्नः शिशिरघ्नश्च महाकक्षे विलौकसः।
न दहेदिति चात्मानं यो रक्षति स जीवति॥
ना चक्षुर्वेत्ति पन्थानं ना चक्षेर्विन्दतेदिराः।
ना धृतिर्बुद्धिमाप्नोति बुध्यस्सर्व प्रवोधितः॥
अनाप्तेर्दमस्मदन्ते नरः रस्त्रमलोहजम्।
श्वाविच्छरण मासाद्य प्रमुच्येत हुताशनात्॥
चरन् मार्गान् विजानाति नक्षत्रर्विन्दते दिशः।
आत्मनाचात्मनः पञ्च पीडयन्ननुपीड्यते॥

[जाना]

युधि०—(स्वतः) पूजनीय विदुरजी जो कुछ कह गये, उससे तो हृदयमे कंपकंपी बंध जाती है। रोमाञ्च हो जाता हैं। हाय रे दुर्योधन! तू इतना नीच हो गया है। भगवन्! सब तुम्हारी ही इच्छा है।



अर्जुन—आर्य्य ! विदुरजीकी बात सुनते ही आपके चेहरे-पर उदासी क्यों छा गई ? आप चुप क्यों हो गये ?

युधि०—भाई, चलो वारणावत पहुंचकर सारा हाल सुनाऊंगा। अभी सिर्फ इतना ही बताऊंगा, कि हमलोगोंके सिरपर एक नई आफत आना चाहती है।

भीम—भाई ! जबतक आप दण्ड-प्रहार कर दुर्योधन रूपी सांप-का संहार न कर लीजियेगा, तबतक यों ही आफत हमेशा पीछे ही लगी रहेगी। मेरी तो राय है, कि :—

दुर्योधन की गर्दन पे बस, कर दीजै तलवारका वार।
मारके ऐसे पापीको कम कर दीजे संसारका भार॥

किन्तु आप कुछ नहीं समझते। सदा शान्त रहो, शान्त यही कहते हैं।

परिणाम इसका सोचना कुछ चाहिये भी आपको।
क्यों पालते हैं आप अब इस आसतींके सांपको॥

युधि०—भाई स्थिर हो।

गाना।

करम गति टारि नाहिं टरे॥
कोटि यतन किन करे कोउ जग पचि-पचि चाह मरे।
विधिको लेख मिटत नहिं मेटे होनी होय परे॥ करम०

(सबका जाना)



दृश्य चौथा

स्थान—कुटी।

(विदुरका प्रवेश)

विदुर—भगवन्! क्या आज्ञा देकर चले गये? प्रभो! दीनहीन विदुरको बल दो, बुद्धि दो, कार्य्य करनेमें दृढ़ रहनेकी शक्ति दो। गोविन्द! देर होनेसे तुम्हारा काम तमाम न हो सकेगा। धर्म्मप्राण पाण्डवगण इस समय शायद वारणावत पहुंच गये होंगे, अब नादान दुर्योधनके बनवाये हुए लाक्षाके मकानमें प्रवेश करते होंगे। क्या ठिकाना, पापी पुरोचन उन लोगोंके घुसते ही घरमें आग लगादे। तो फिर उपाय? प्रभो! तुम्हारे भक्त पाण्डवोंका क्या उपाय होगा? क्या उनका नाश हो जायगा? तो भगवन् उनकी रक्षाका भार विदुरको क्यों सौंपा था? अगर आज तुमने अपने भक्तोंकी लाज नहीं रक्खी, तो कलसे तुमको भक्तवत्सल कौन कहेगा?

न लेगा नाम फिर कोई हसीमें सब उड़ायेंगे।
जगतमें तुमको निर्बल दुष्ट निर्लज सब बतायेंगे॥

श्यामय! विदुर सब कुछ सह सकता है; किन्तु प्राण



रहते ; तुम्हारे भक्तका अपमान नहीं सह सकता। दो, मुझे बल दो, बुद्धि दो, कार्य्य करनेमें दृढ़ रहनेकी शक्ति दो।

[सहसा वैष्णवीगणका प्रवेश]

गाना।

क्यों घबरावें क्यों अकुलावे, परे प्यारे भक्त हमारे।
मत मन मारे यों दुख पारे हाज़िर हैं हम तेरे द्वारे॥
करते क्यों ग़म, हम सब हरदम, तेरे साथी अहैं सदाका।
सब दुख खोवें, भक्तन होवे कबहूं हरगिज़ बाल न बाँका॥

१ वैष्णवी—विदुर! मैं तुम्हारी बुद्धि हूं।

विदुर—तू हमारी बुद्धि है? तो माता, तू जानती होगी, कि नादान दुर्योधनने वारणावतमें एक लाक्षाका मकान बनवाकर उसमें पाण्डवोंको स्थान दिया है! एक दिन उसी लाक्षाके मकानमें आग लगाकर वह उन लोगोंकी जान ले लेगा। देवी! बताओ, इस समय उनके इस विकट सङ्कटसे उद्धार पानेका उपाय बताओ।

१ वैष्णवी—कुछ आदमियोंको भेजो, जो लाक्षागृहसे लेकर गङ्गातीरतक सुरङ्ग तैयार कर रक्खें॥ गङ्गातीरपर नाविक हरदम हाज़िर रहें। जिस वक्त पुरोचन लाक्षागृहमें आग लगाये, उसी वक्त पाण्डव सुरङ्गके रास्तेसे निकल जायें और गङ्गा पारकर अपनी जान बचायें।

विदुर—धन्य है बुद्धि! धन्य! देवी! तुमने विदुरका आज बड़ा



उपकार किया। किन्तु माया! विदुर तो दरिद्र है, यह भिखारी कहाँसे लोकबल पाये, जो सुरङ्गको खुद्वाये ?

२ वैष्णवी—विदुर, दरिद्र तो तुम अपनी इच्छासे हो। तुमने अपना धन मान सब कुछ भगवान्‌के चरणारविन्दमें अर्पण कर भक्तिरूपी परम शक्ति प्राप्त की है। तीनों लोक तुम्हारे पैरोंपर झुके हैं। विदुर! तुम चिन्तित मत हो। यह देखो, मैं खनककी मूर्त्ति धारणकर सुरङ्ग खोदनेके लिये चलीं।

सब—हम सब पाँचों पाण्डवोंकी सहायताके लिये चलीं।

[जाना]

विदुर—जाओ, जाओ, दुनियाके कीट-पतंगसे लेकर राज-राजेन्द्र तक सभी जाओ। धर्मात्माके धर्म-प्राणकी रक्षाके लिये चौदह विराट ब्रह्मांडकी जितनी शक्ति आज साकार रूपमें वर्तमान हों, सभी उर्द्ध्वश्वासके वेगसे जाओ। (स्वगत) और जाओ विदुर! जाओ, जड़ शरीरको हस्तिनापुरमें छोड़, सूक्ष्म शरीर धारणकर पांडवोंको विपद्‌-जालसे मुक्त करनेके लिये जाओ।

(पद्मावतीका प्रवेश।)

पद्मा—प्रभो! मध्याह्न हो चुका।

विदुर— (स्वगत) जाओ विदुर! जाओ। धर्मात्माओंके प्राणोंको बचाओ।



जाओ करो वह योग कि जिससे धर्म-ध्वजा फहरा जावे ।
धर्मकी महिमा क्या है जगतमें सभीकी समझमें आ जावे ॥

पद्मा—प्रभो ! पूजा-पाठकासमय बीता जा रहा है ।

विदुर—(स्वगत) डरो नहीं भीम ! तुम अभी स्थिर रहो । तुम अपना वीरदर्प युद्धके मैदानमें दिखाना और तीनों लोकको कम्पायमान करना । अभी धैर्य धारण कर काम करो ।

पद्मा— प्रभो क्या इसी जगह पूजा पाठका प्रबन्ध कर दूं ?

विदुर— (स्वगत) बहुत ठीक, बहुत ठीक । भीम ! तुम्हारी यह युक्ति बहुत ठीक है । तुम्हीं पहले घरमें आग लगा देना, पापी पुरोचनको, उसके कामका मज़ा चखा देना ।
कुछ तो फल पा गये वह दुष्ट अपने नीच कर्मका ।
भार हो संसारका कम और विजय हो धर्म का ।

पद्मा—प्रभो कहते डर लगता है, आप इधर गंभीर चिन्तामें निमग्न हो रहे हैं और उधर पूजा-पाठका समय बीता जमा रहा है ।

विदुर—(स्वगत) चञ्चल भावसे कालही सब कार्य्योंका नियन्ता है। काल ही पाकर लक्ष्मी-स्वरूपी सीता रावणके घर और फिर काल ही पाकर रावण-बध-नाटकका अन्तिम यवनिका-पतन हुआ । कालहीके वशीभूत होकर दुर्योधनने कृष्णभक्त पांडवोंको छलसे वारणावत भिजवाया है और देखना, फिर कालहीके वशीभूत होकर कृष्णभक्त पांडवगण हस्तिनापुर आयेंगे और दुरात्मा



दुर्योधनको हस्तिनापुरके राज्यसे च्युत करायेंगे। वह दिन, वह दिन, आरहा है। कोई देख पाते हो क्या? अधर्मीका सर नीचा होगा। देखो, देखो, किस रोमाञ्चकारी घटनाके साथ अधर्मका पराजय हो रहा है। देखो, देखो, धर्मक्षेत्र-कुरुक्षेत्रमें पापियोंको कैसा दण्ड मिल रहा है। देखो, देखो, दुर्योधन-दुःशासनकी क्रूरता देखो। देखो स्नेहान्ध अन्ध धृतराष्ट्रकी आखोंसे आँसूकी धारा किस भयंकर वेगसे बह रही हैं। ओह! हरे कृष्ण, हरे कृष्ण!

पद्मा—प्रभो! प्रभो! सीमासे बाहर कहां भाग रहे हैं? गोविन्द आपको कहां ले जा रहे है? हा गोविन्द! क्या इस दुःखिनीको वहां न ले चलोगे? गोविन्द! गोविन्द!

विदुर—गोविन्द! गोविन्द! हमारी कुटीमें कौन गोविन्द नामके अमृतकी धारा बरसा रहा है? कौन? पद्मा,पद्मा! गोविन्द-की लीला क्या देख नहीं पाती? आओ, देखो। (हाथ पकड़ कर) कैसा सुन्दर अभिनय हो रहा है, देखो। धर्मक्षेत्र-कुरुक्षेत्रमें महायुद्धकी कैसी भयंकर तैयारी है, देखो। एक तरफ भीष्म, द्रोण, कर्ण, कृपाचार्य, दुर्योधन, दुःशासनादि महा महा योद्धागण पाण्डवोंके विरुद्ध, किस तरह कालके समान विकराल रूप धारण कर खड़े हैं और दूसरे तरफ देखती हो पद्मा, ऊँचे रथके शिखरपर वंशीधर पीताम्बरधारी हमारे गोविन्द मुरारी उस मुनिमन-हारी वेषको त्यागकर सारथीके साजसे सज्जित हो, प्रिय



अर्जुनके साथ किस तरह अड़े हैं, देखो हो पद्मा! देखो, धर्माधर्मका भयंकर संग्राम देखो।

पद्मा—प्रभो! यह भीषणसे भी भीषण चित्र इन आँखोंसे देखा नहीं जाता। हाय! कुरुपुरी श्मशान हो रही है, श्रृगाल-कुत्ते उस श्मशानमें शोणित पानकर बड़े आनन्दके साथ घूम रहे हैं, विधवा कुरुनारीगण छाती पीट-पीट कर रो रही हैं, अपने सुहागकी सेन्दुरको धो रही हैं, उनकी हृदयभेदी मर्म-व्यथासे बनकी चिड़ियाँतक व्यथित हो रही हैं। नाथ! चलिये, इस समय एक बार उस मदनमोहन भगवान्का ध्यान करें। चित्त चञ्चल हो रहा है। हम लोग दीन-दरिद्र हैं, हमलोगोंको सांसारिक चित्रसे क्या गरज़? क्यों गोविन्द! हमलोगोंको क्यों यह चित्र दिखाते हो? क्यों हमलोगोंके चित्तकी चञ्चलताको बढ़ाते हो?

गाना।

सुन लो मेरी, विनती घनश्याम।
मन मन्दिरके मोहन तुमहीं, हो मूरति अभिराम ॥सुन०॥
तृष्णा बेड़ी तोड़ि कर, छोड़ि जगत जंजाल।
पद्मा भई भिखारिणी, तुम जानत गोपाल ॥
"नन्द किशोर" तो फिर क्यों यह छवि, दिखलाते कवि
श्याम सुन लो मेरी, बिनती घनश्याम ॥

(दोनोंका जाना।)

दृश्य पांचवां

[स्थान-शान्तिका मकान]

शान्ति एक आराम कुर्सीपर अकेली बैठी हुई है ।

शान्ति—(स्वगत) क्या करूं, कैसा उपाय लगाऊं, कि साधुओंका पुण्य दर्शन हो । इस मकानकी ऊंची-ऊंची दीवालोंको किस प्रकार लांघकर जाऊं । परदेके रिवाजने तो हम स्त्रियोंका गला घोंट डाला । यह कैसी स्वार्थपरता है, कि पुरुष चारो चौहकीसे हो आयें, किन्तु स्त्रियोंको चार हाथके आंगनेमें ही आजीवन बंधकर रहना पड़ता है । ओह ! साधुका दर्शन, साधु ही नहीं, अन्तर्यामी महात्माओंका दर्शन किस प्रकार कर सकूंगी ? चम्पा बड़ी भाग्यवती है, कि उसने उनका खूब ही दर्शन किया, पुण्य कमाया, जीवनका फल पाया । किन्तु मुझसी हतभागिनीके लिये कोई उपाय नहीं । अच्छा क्या करूंगी ? बुढ़ऊसे आज अवश्य कहूंगी, कि मुझे महात्माका दर्शन करनेकी आज्ञा देदें । (नेपथ्यकी ओर देखकर) यह खाँसता है कौन इतनी ज़ोरसे ? (कुछ देरतक अनकनानेका नाट्य करती है) ओह ! ये तो मेरे ही बूढ़ऊकी आवाज़ मालूम पड़ती है ।

(खांसते हुए लाठीपर ठेघते और एक हाथसे गला दबाते हुए सेठजीका प्रवेश)



शान्ति—(स्वगत) बुढ़ापेने तो इनकी सारी ताक़त नष्ट कर दी और उसपर दयाने ऐसा दमकल लगाया है, कि बेचारे-का प्राण हरदम जोखोंमें रहता है, लेकिन तो भी देखिये, इनके शौक दिलसे दूर नहीं होता है,वरन् रंगमें चूर-चूर हो रहा है। अच्छे बूढ़े। कुछ दिन और ठहरो। तेरे दुर्व्यसनों-का अच्छा मज़ा चखाती हूं। जैसे तूने मेरा जीवन व्यर्थ किया है और रुपयेका लोभ दे,मेरे माता-पितासे मुझे ख़रीद लाया है, वैसेही तेरा जीवन मैं व्यर्थ कर दूंगी और कौड़ी-कौड़ीको मुहताज बना छोड़ूंगी, तुझे संसारमें मुंह दिखा-नेके योग्य न रख छोड़ूंगी। त्रिया-चरित्रकी बिचित्रता दिखाऊंगी और इन्हें नाकों पानी पिलाऊंगी।

(प्रगट) प्राणनाथ ! क्या हो गया है ?

से०—प्यारी ! क्या कहूं खांसी हो गई है सो प्राण जा रहा है।

शान्ति—बुढ़ापेमें दमादम निकलता ही है।

से०—(खांसता हुआ) क्या कहती हो प्यारी ! बुढ़ापा ? सो क्या मैं बूढ़ा हूं ? यह तो रात दही खा लिया ! न मालूम हरामज़ादी ग्वालिन कई रोज़का दही हाँड़ीमें रखे हुई थी।

(खाँसता हुआ बैठ जाता है। शान्ति पीठ दबाती है)

शा०—प्राणनाथ ! इसीलिये न मैं आपको बूढ़ा कहती हूं। उठिये, चलिये दालानमें (बाँह पकड़कर उठानेका नाट्य करती है)।



से०—प्यारी! (खाँसता है) तुझे किसने कह दिया है कि मैं बूढ़ा हूं। देख, मैं कैसा सीधा सुडौल नवयुवक हूं। क्या खांसी होजानेसे कोई बूढ़ा हो जाता है (लाठीके सहारे खड़ा होकर अकड़नेका नाट्य करता है) देख अबसे कभी बूढ़ा मत कहना।

शां०—हरगिज नहीं। अब भला कैसे कह सकती हूं? जिस दिन आप बूढ़े भी हो जायेंगे, उस दिन भी नहीं कहूंगी, लेकिन प्राणनाथ! मेरी एक प्रार्थना सुन लीजिये और इस वक्त हुक्म दीजिये।

से०—(स्वगत) वाह! वाह!! प्यारीके मुंहसे जवान कहलानेका अच्छा अवसर आगया है। प्रार्थना क्या करेगी दो चार थान और जेवर वगैरह मांगेगी। बस क्या है? जेवर वगैरह दे कर सदाके लिये जवान बन जाऊंगा। (मूछोंपर ताव फेरता है) क्या मैं बूढ़ा हूं। हरगिज नहीं। (प्रगट) कहो, कहो प्यारी! जल्द कहो। क्या कहना है?

शां०—प्यारे! आपकी तन्दुरुस्तीके लिये मैंने एक अच्छी युक्ति निकाली है।

से०—(खुश होनेका नाट्य करताहुआ स्वगत) प्यारी मेरी तनदुरुस्तीकी युक्ति निकालती है, क्यों नहीं बड़ी सती है। (प्रगट) कहो, कहो, कौनसी युक्ति है?

शां०—प्राणनाथ! शहरमें एक साधु आये हैं। वे बड़ेभारी सिद्ध हैं। यदि उनसे जाकर मैं आपकी बीमारीकी हालत कहूं



तो वे अवश्य ऐसी विभूत देंगे कि आपकी शक्ति दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगेगी।

से०—प्यारी! ऐसा हुक्म मैं नहीं दे सकता।

शा०—कारण?

से०—परदेका लिहाज़।

शां०—क्या परदेका लिहाज़ ज़रूरी है?

से०—हाँ, ज़रूरी है।

शां०—क्यों?

से०—जाति-बिरादरीका डर।

शां०—क्या साधु-सन्तों, और गुरु ब्राह्मणोंसे भी परदा?

से०—नहीं, इनसे कौन परदा।

शां०—तब?

से०—तबतो कुछ नहीं, योंही। दिनको रास्तेमें बहुतसे लोग रहते हैं।

शां०—नहीं, रातही सही।

से०—रातकी तो कोई बात नहीं, लेकिन......

शां०—क्या मेरे सतीत्वमें आपको सन्देह है? क्या आपके मनमें पाप बसता है? प्राणनाथ! ऐसी बात दिलमें मत लाइये। मेरे सतीत्वपर धब्बा मत लगाइये। मैं अपने सती-धर्म्म-हीको धन समझती हूं। इसके सिवा आपसा सुन्दर स्वरूपवान् दूसरा होहीगा कौन?

से०—(स्वगत) ओह! अब मालूम होता है कि प्यारी मुझे



दिलसे चाहती है। लेकिन तिसपर भी गैरोंके पास जाने देना नहीं चाहिये। क्या जानें क्या हो जाय! (प्रगट) प्यारी! समाज-प्रबल हैं। झूठका भी सांच ही कर देता है।

शां०—(स्वगत) अच्छा समाज है। पापका समाज है। ठहर रे समाज! तेरी नाक मैं आज काटती हूं। तेरी पोल मैं आज खोलती हूं।

से०—(प्रगट) प्यारे! समाज तो गुरु ब्राह्मणोंसे परदा करने नहीं कहता। मुझे शिष्य होना भी तो है।

से०—साधुओंके आनेकी बात तुझसे किसने कही?

शां०—चम्पाने।

से०—कहां है चम्पा बुलाओ।

(शांति चम्पाको बुलाने जाती है)

से०—(स्वगत) यह सब कुछ नहीं, कुल-फ़ितरत हरामज़ादी चम्पाका है। वह ख़ुद बदचलन है और दूसरोंको भी बनाना चाहती है। अच्छा, मैं आजही उसका सर फोड़ता हूं।

[चम्पाके साथ शांतिका प्रवेश]

से०—(क्रोधित स्वरसे) क्योंरी चम्पा फ़ज़ूल फ़ज़ूल बाबाकी ख़बर क्यों घरमें लाती है रे? कौन साधु यहां आया है कि तारमें ख़बर देदिया।



च०—सरकार ! मालकिनीको शिष्य होना है इसीलिये सिद्ध बाबाको बुला पठाया है ।

से० (स्वगत) निमन्त्रण भी दे दिया गया। (प्रगट) अच्छा खड़ी रहो शैतान ! तुझे साधुसे भेट कराता हूं।

(लाठी हाथमें उठाये चम्पाको मारनेके लिये तलवार लाता हुआ दौड़नेका नाट्य करता है और गिरकर खाँसता है)

शां०—(स्वगत) अच्छा हुआ। बूढ़ापेमें खोस चढ़ गया है। (प्रगट) प्राणनाथ ! नाहक खीस करते हैं। देखिये कैसा चोट लगी ।

(उठानेका नाट्य करती हैं और उठाकर भीतर लेजाती हैं। सेठजी खांसते जाते हैं)

(पटाक्षेप)



दृश्य छठां

स्थान—वारणावत।

[लाक्षागृह का द्वार]

भीम—क्या कहूं ? भाई युधिष्ठिरको क्या कहूँ ? आज पाण्डवोंको पापी पुरोचनके अधीन लाक्षागृहमें वास करना पड़े। एक चिड़ीमार महा विकराल ऐरावत हाथीको अपने जालमें फँसा रक्खे। ओह! कैसा सन्ताप है! जो भीम इच्छा करते ही दो चार दुर्योधन, हज़ार-हज़ार पुरोचनका पल भरमें संहार सकता है, उसकी आज यह हालत! आज्ञा दो, भाई! प्रसन्न मन-से भीमको आज्ञा दो और देखो अकेला भीम किस तरह कुरुकाननके पौधोंको कुचल डालता है।

मौत की परवा नहीं है मुझको डर है आपका।
भीमका कुछ भी नहीं ये जिसम न सिर है आपका।
होके मैं बलवान इतना कष्ट सह सकता नहीं।
सिंह दम भर जाल में व्याधके रह सकता नहीं॥

(खनक का प्रवेश।)

खनक—सरकार! सुरंग तैयार है। अब मुझे यहां रहनेकी क्या दरकार है?



भीम—क्या भाईजीको यह समाचार सुनाया है ?

खनक—हां, तावेदार सुना आया है। उन्होंने ही मुझे आपके पास भिजवाया है।

भीम—बहुत अच्छा।

खनक—तो अब यह दास आपके चरणोंमें सिर झुकाता है और हस्तिनापुर को जाता हो।

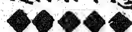
भीम—जाओ, विदुर जी से मेरा कोटि-कोटि प्रणाम कहना और कहना कि हम लोगोंका उन्होंने जो उपकार किया है, उसका बदला हम चारों भाई कभी चुका नहीं सकते।

उनके अहसानका हम बदला चुका सकते नहीं।
इस कदर हम दब गये कि सिर उठा सकते नहीं।

[खनक का जाना]

भीम—दुरात्मा दुर्योधन! आज वारणावतमें एक महायज्ञका अनुष्ठान होगा और यही लाखका मकान यज्ञ करनेका स्थान होगा। यज्ञकर्ता होंगे महाराज युधिष्ठिर और आहुति होगा पापी पुरोचन। अभी ज़रा ठहर, सूर्य्यदेवको अस्ताचल जाने दे और सभीको सो जाने दे। तब यज्ञ शुरू होगा। दुर्योधन! तू उस यज्ञकी अग्नि शिखाको हस्तिनापुरसे देख पायगा। तब तेरी समझमें आयगा कि इस महायज्ञका महाफल कितना मीठा है।

[जाना]



(पुरोचन का प्रवेश ।)

पुरोचन—ह-ह- हम -पु-पु - रोचन-दु-दु- दुर्योधन - का- मि-मि- मित्र। प-प पाण्डव हमारे जालमें फ-फ- फंसा है। अ-अ आज नहीं; क-क- कलकी रात। ब-ब- बस - कटांग कटांग - कट - कटांग - फटांग- फट। ज-ज जाऊं- अ- अ- अभी मौ-मौ- मौजसे सो-सो सोऊं।

[जाना]

(हाथमें मशाल लिये भीमका आना)

भीम—अग्नि! जलो, जलो, खूब तेजीसे जलो। बढ़ाओ, अपने तेजको बढ़ाओ, अपनी शिखाको बढ़ाओ। आज मैं पूजा चढ़ाऊँगा; तुम्हें पेटभर भोजन कराऊँगा। अग्निदेव! मैं तुम्हारी पूजा करता हूं, प्रशन्न हो, दास भीमके दिये हुए इस लक्षागृहके भक्ष्यके भक्षण करो। यह पाण्डवोंके दुश्मन दुरात्मा पुरोचनके सोनेकी कोठरी है। वह पापी यहां सो रहा है, इसलिये तुम्हें इस कोठरीके द्वारपर बिठाता हूं। देखूंगा अग्निदेव! देखूंगा तुम्हारा कितना पराक्रम है?

तेजको विस्तार दो आकाशसे पातालतक।
देख कर जिसको हो कंपित शेषसे दिगपाल तक॥
क्रोध वह प्रगट हो जिससे दुष्ट जलकर ख़ाक हो।
जिससे यह संसार खल और पापियोंसे पाक हो॥

नेपथ्यमें—हाय, हाय, सर्वनाश हुआ, सर्वनाश हुआ। धर्मराज युधिष्ठिरका घर जलकर ख़ाक हुआ। हाय! हाय! (कोलाहल)।

[सीनका ट्रैन्सफर होना, गंगातीर नज़र आना]

(वेगसे कुन्ती और पंच पाण्डवोंका प्रवेश)

युधिष्ठिर—भाई भीम! अब हमलोग सुरङ्गके रास्तेसे बाहर निकल आये।

भीम—और पापी पुरोचनको भी अपने कर्मका दण्ड दे आये।

कुन्ती—आज ईश्वरने हमलोगोंके प्राण बचाये।

अर्जुन—चलो छुट्टी हुई।

युधि०—नहीं, नहीं, अभी छुट्टी नहीं। हमलोग लाक्षागृहसे निकल आये, यह समाचार जब दुरात्मा दुर्योधन सुन पायगा, तो इस असहाय अवस्थामें वह दुष्ट हमलोगोंपर विशेष अत्याचार करनेके लिये तैयार हो जायगा। इसलिये जबतक हमलोग इस स्थानसे चुपके निकल न जायें तबतक अपनेको निरापद न बतलायें।

कुन्ती—बेटा यहांसे अभी किस तरह निकल पाओगे? देखो, रातका भयावन समय है, सर्वत्र घोर अन्धकार छाया हुआ है।

युधि०—विदुरजीने खनकके द्वारा कहला भेजा था कि जब हमलोग सुरंगसे बाहर निकल आयेंगे तब एक नाविकको



नाव लिये तैयार पायेंगे ; किन्तु मा ! इस विपद्के समय में उसको भी नहीं देख पाता।

नकुल—भाई ! वह कौन गाना गा रहा है ?

सहदेव—बड़ी मीठी ताने लगा रहा है।

[नाविकका प्रवेश]

गाना।

मैं हूं नाविक नाव खेवैया।
गंगातीर रहैया, नदीको पार करैया ॥ मैं० ॥
घोर अंधेरे पथिक बुलाऊं और नाव चढ़ाऊं।
संकट विकटसे गंगा पार लगाऊं ॥ मैं० ॥

युधि०—चलो नाविक, हमलोग भूले भटके मुसाफिर हैं, हमलोगोंको रास्ता बता दो और गंगाके पार लगा दो।

[सबका जाना]

ड्राप।







पथ

[कृष्णका प्रवेश]

गाना ।

भक्तहि जीवन प्राणमम, भक्तहि मोहि सुखदेन ।
सुनि भक्तन की टेर को, चित्तमें रहे न चैन ॥
गज की अरज सुनत हम धाये भक्तन को दुख टारा है ।
धरि नरसिंह को रूप हमीने जन प्रह्लाद उबारा है ॥
जब जब बिपत्ति पड़ी भक्तन पै तब तब तिनको तारा है ।
भक्तन के हित वेष विविध विधि समय २ पर धारा है ॥
भक्त बुलाये, जभी प्रेम से, तभी जायें उनके दुखको दूर भगायें

अहा ! मेरा परमभक्त विदुर भिक्षारनके लिये दूर निकल गया है । रास्ते की थकावट से उसका शरीर चकना चूर हो



गया है। भिक्षा की झोली लिये बड़े मुश्किल से वह आगे को पैर बढ़ा रहा है और मेरे नाम की रटन लगा रहा है। भला, ऐसे समय में मैं क्यों कर चैन पाऊं ? नहीं, इसी दमजाऊं और अपने भक्त की तकलीफ दूर कराऊं। अहा, वह इधर ही आ रहा है। हाय, मेरे रहते मेरा भक्त कितना दुःख पा रहा है। अच्छा, अभी ज़रा बगल में छिप जाऊं।

(साइड में छिप जाना)

[झोली लिये धीरे २ विदुर का आना]

विदुर—नारायण, नारायण, अब कबतक कर्मके बन्धन में पड़ा रहूंगा ! कबतक पापी पेट की पीड़ा सहता रहूंगा ? कब-तक पाप पुरी कुरूपुरी में धर्मात्मा पर अन्याय और अत्या-चार का वार देखता रहूंगा ? मधुसूदन ! अब तो सहा नहीं जाता, तुम्हारे बिना सारा संसार है असार दिखाता। प्रभो ! तुम्हारे मनोहर मूरति की छाया कबतक पाऊंगा ? कब उस आनन्द सिन्धु में गोता लगाऊंगा ? ओह, अब तो आगे चला नहीं जाता। कृष्ण, कृष्ण, हरे कृष्ण, हरे कृष्ण।

(विश्राम करना)

कृष्ण—(स्वगत) पवन देव ! बहो, बहो, धीरे धीरे बहो। मध्याह्न के ताप को दूर करते हुए बहो। मेरा भक्त रास्ते की थकावट से विश्राम कर रहा है। विदुर, तुम यहीं अच्छी तरह विश्राम करो। मैं तुम्हारी झोली कुटीमें पहुंचा



आता हूं। (झोली लेना) यदि आज कृष्ण भारस्वरूप अपने भक्त की झोली न उठायगा, तो उसका नाम उसके भक्तों के पास क्यों कर रह जायगा ?

विदुर !

उठाकर माथ पर झोली मैं तेरे साथ जाऊंगा।
तुम्हारे वास्ते खुद मैं सभी दुख को उठाऊंगा ॥
न झोली छूके दोगे तुम जो मुझ को देख पाओगे।
इसी से साथ चल कर भी न अपने को दिखाऊंगा ॥

(छिपना)

विदुर—ओह ! अभी तक नारायणकी पूजा हुई ही नहीं और मैं सोने चला था। नारायण, नारायण। (उठना) क्या हुई ? विदुरको भिक्षा की झोली क्या हुई ? कौन लेगया ? दया मय ! यह तुम्हारी कैसी लीला है ? अच्छा, बहुत अच्छा किया, मैं आनन्द हूं। आज मैं और पद्मा दोनो जने उप-वाश ही कर जाऊंगा। इसमें हर्ज ही क्या है ? विदुर की भिक्षा से दीन दरिद्र गुजर करें। तुम्हारी इच्छा पूरी हो। जाऊं, अब नारायण की पूजा में मन लगाऊं।

(जाना)

कृष्ण—(स्वगत) चलो भक्त, चलो, यह मैं भी तेरे साथ चला।

(विदुरके पीछे २ कृष्णका जाना)

(पटाक्षेप)



दृश्य दूसरा

स्थान—मार्ग।

(अलबेला दास इत्यादिकोंका गाते हुए प्रवेश)

भजन

(तर्ज़—ख़बर नहीं है पलकी)

मनरे राम भजनमें रमिजा तनकी खबर नहीं पलछनकी। टेक
माया मग में जग अभ्भुराना सुरत नहीं सुरपति की।
जब यमराजा जांच करेंगे, छुटेगी सबकी सनकी ॥तनकी॥
गुरुजन, परिजन, कुटुम कबीला, लीला है लव भर की ।
धन दौलत सब छूटजायेंगे, शानशौक सब मनकी ॥ तनकी॥
अन्त धर्म्म ही संग चलेगा, और चीज़ न जग की।
चार दिनन की जगत चांदनी पुनः रातहै तमकी ॥तनकी॥
त्यागो मन झट झूठ मोह को, झंझट कोदो झटकी।
जगन्नाथ जगदीश भजो "शिव" जय जय कहु जगपतिकी ॥तनकी॥

अल—क्यों जी टंकोर दास, तुमतो इस नगर में बहुत दिनों तक ठहरे थे,कहसकते हो झावरमलका कौन सा मकान है?

टं—हां महाराज! कह क्यों न सकता हूं। इसी महल्ले में तो मैंने बारह वर्षतक मुंशी झोटंहू लाल बाबू नामक एक



नकल नवीस के यहां टहलू रहा था। एक दिन मालिक ने मुझे मारा और पिताजी ने भी बहुत कुछ भला बुरा कहा बस क्रोध में आकर मैंने जाकर लंगोटी पहन ली और एक साधु के यहां जाकर जो अगले पेड़ के नीचे ठहरे थे डंडा माला लेलिया। मेरा घर भी यहां से निकट ही है जहां मैं ने अपनी स्त्री को छोड़ दिया था। (मुंह फेर कर धीमे धीमे रोने और सुसकनेका नाट्य करता है)

अल०—रोते क्यों हो ? क्या घर का मोह माया घिर आया ? साधु होकर भी रोना ? क्या साधु होनेमें गृहस्थी से कम आराम है ? घरमें तो रहने से तो दुखही दुख रहता है। यदि तुम डंडा लंगोटा लेकर साधु न बने होते तो अब नकल नवीस साहबका जूठनही खाकर खुश होते रहते। मत रोओ चुप होजा। देखो आज ऐसा ढब लगाता हूं कि जन्म भर के लिये झंझट दूर हो जाता है।

टं—नहीं नहीं, रोऊंगा क्यों रामजी के आसरे से, कुछ याद पड़ गया था रामजीके आसरे से।

[चम्पा का प्रवेश]

अल—क्यों चम्पा तेरे मालिक का घर इसी जगह है ?

चं—महाराज ! दण्डवत। आइये यही मकान है। मालकिनी जी आपके दर्शनकी प्यासी बड़ी देरसे राह देख रही हैं।

अल—अच्छा चलो, मैं भी तो दर्शन देने को चला आया। (पट परिवर्तन। स्थान शांतिका घर। शांति बैठी है।)



चं—मालकिनी ! येही महात्मागण हैं, जिनके दर्शन की प्यासी तू आप इन्तज़ारी में बैठी हुई है।

शां—महाराज को दण्डवत्।

अ—देवी ! पूतन फलो दूधन नहाओ।

शां—सब कृपा आपही की सरकार !

दों—इसमें क्या सक ?

टं—बिलकुल ठीक रामजी के आसरे से।

अ—देवी तू बड़ी भाग्यवती है। तेरी लिलाट की रेखाएं बड़ीही अच्छी पड़ी हैं।

शां—महाराज ! भाग्यवती मैं कैसे ? मुझे तो न दिन चैन है और न रात। चौबीसो घंटे चिन्ता ही करने में बीत जाते हैं।

अ—सो क्यों देवी ? हाथलाओ तो देखूं सही। (शांति का हाथ अपने हाथ में लेकर देखता है) देवी ! नये पुराने के संयोग से तेरा चित्त उदास रहा करताहै सही लेकिन हस्तरेखा का योग तो ऐसा कहता है कि तुम्हें अब चिन्ता न रहेगी बहन् तू अब बड़ी शान्तिको पावेगी। देखो तुम्हारे गाल पर (उंगलीसे गाल छूता है) तिलवा है। ऐना मंगा कर देखलो।

शां०—शान्ति मिलेगी ख़ाक। रोज़ दिन तो चिन्ताकी अग्नि हृदयको दग्ध कर रही है। क्या मुझसी हतभागिनी संसारमें कोई होगी ?

अ०—देवी घबराओ नहीं। साधुके किये क्या न होता है ?

अगस्तजी साधुही थे जिन्होंने समुद्र को चुल्लूमें करके घोंट गये थे।

शां०—महाराज ! क्या मुझे कभी आनन्द मिल सकेगा ?

अ०—जरूर, जरूर। यदि मेरा कहा करो तो।

शां०—क्यों न करूंगी ? जरूर महात्माकी बात मानूंगी।

(एक दासीका प्रवेश)

दासी०—मालकीनी ! महाराजजी लोगोंके लिये वालभोग तय्यार है।

शां०—महाराज ! बालभोग तय्यार है।

अल०—(स्वगत) हायरे ! सारा बात बनकर विगड़ रहा है (थोड़ी देर ठहर कर) मैं फलाहारही करता हूं इन लोगोंको पवा दो।

शां०—चम्पा ! लेजा इन दोनों जनोंको बालभोग पवाओ और महाराज जीके लिये फलाहारकी तैय्यारी करो।

(टंकोरदास और ढोढ़ाई दासको दोनो दासी दोनों ओरसे भीतर लेजाती हैं)

शां०—तब महराज़ जी ! मैं कैसे आनन्द पाऊंगी ?

अ०—यदि मेरी चेली बनजाओ तो दिन रात, उठते वैठते, सोते जागते, खाते पीते सदा आनन्दही आनन्द है।

शां०—(स्वगत) ओह ! ये तो बड़े भारी महात्मा हैं। अलबत्त ये मेरे दुःखको दूर करके आनन्दकी राह बता सकेंगे। इनकी चेली मैं बन जाऊंगी और अवश्य बन जाऊंगी।



(प्रगट) महाराज ! चेली कैसे बनाइयेगा ?

अ०—बस मन्त्र पढ़ाकर ।

शो०—तब होइये मन्त्र पढ़ाइये न ।

अ०—यहां नहीं । यहां तो बहुतसे आते जाते रहते हैं मंत्र कोई ऐसी वस्तु नहीं हैं जो बारयाम बताया जावे । यह तो एकान्त स्थानमें बतानेकी चीज है ।

शो०—अच्छा चलिये दोमंजिलेपर ।

अ०—बहुत खूब ।

(दोनो जाते हैं)

(झाबर मलका खांसते हुए प्रवेश)

झा०—(स्वगत) क्या कहूं दवा कर आताहूं खांसी दूर होती नहीं है । प्यारी कहती है कि चुकि मैं बूढ़ा हो गया हूं इसलिये खांसी की जड़ उखड़ती नहीं है । (कुछ ठहर कर) क्या मैं बूढ़ा हूं ? [ठहर कर] नहीं हरगिज़ नहीं । प्यारी मुझेबूढ़ा कहती है मज़ाक़से । चढ़ती जवानी जिसकी होती है उसे ख़ास कर मज़ाकही सूझती हैं ।

[प्रगट] चम्पा ! चम्पा !! ऐ मंगली !!! जरा हुक्का बोझ कर ले आओ । मिंसरिया ! कुर्सी ला ।

[मिसरिया कुर्सी लाकर देता है]

झा०—मिसरिया !

मि०—जी सरकार ।



ख्वा०—देख तो भीतर हरामज़ादी लौंड़ी सब क्या कर रही है हुक्का मांगा सो अबतक न दे गई और मालकीनी को कहो कि भोजन की तय्यारी करें। [खांसता है।

[मिसरिया जाकर लौटता है]

मि०—सरकार! भीतर तो कोई लौड़ी नहीं है और न मालकीनीही का पता है।

ख्वा०—जरा ठहर कर जाना कहीं भीतर बाहर गई होगी।

मि०—बहुत अच्छा सरकार।

ख्वा०—मिसरिया !

मि०—जी सरकार।

ख्वा०—कह तो मेरा केस काला है न।

मि०—खूब है कि। भौंरे सैन काला है।

ख्वा०—मिसरिया !

मि०—जी सरकार।

ख्वा०—क्या मैं बूढ़ा हूं ? तुम्हारी मालकीनी मुझको बूढ़ा कहती है।

मि०—(स्वगत) बूढ़ा गायका इंटाके लटकन। कब्रमें अब, जैहें तिसका ठिकानाही नहीं लेकिन जवान होनेकी ख्वाहिश लगी ही हुई है।

[प्रगट] सरकार अभी बूढ़े कैसे ? मालकीनी तो ऐसे ही बिन बात बोलती रहती हैं। वे तो मुझकोभी बूढा कहकर पुकारती हैं।

झा—(स्वगत) सचमुच ही मुझे बड़ी तफ़रीबाज़, इशारेपर उड़नेवाली औरत मिली है। रुपया लगा, तो लगा लेकिन एक अच्छी जोरु मिल गई। वह तो हमेशह हंसाती ही रहती है। उसकी सब बात दिलको बहलानेवाली होती है। (ठहरकर) लेकिन··· ··· जब वह मुझे बूढ़ा कहती हैं तब जो दुख जाता हैं। क्या मैं बूढ़ा हूं। (प्रगट) मिसरिया! देख अंगनेमें क्या हालचाल है। भूख लगी है भोजन चौका पानी लगवाओ और मङ्गलीसे हुक्का भेज दे।

(मिसरिया भीतर जाकर लौट आता है)

मिस०—सरकार भीतर तो कोई भी नहीं है।

झा०—(क्रोधित होकर) क्या कहता है शैतान। कोई बहिन है अंगनेमें। अंगनेमें नहीं है तो क्या आकाशमें उड़ गई? क्या वे चूही हैं, कि बिलमें घुस गईं?

मि०—सरकार! विश्वास न हो तो खुद ही चलकर देख लें और यदि बात झूठ पड़े, तो जो कुछ सजा दें।

झा०—अच्छा चल, लेकिन देख, अगर बात ख़िलाफ़ हुई तो तेरी खोपड़ी नहीं बचेगी।

(दोनों भीतर जाते हैं)

झा०—(नेपथ्यमें) ओ प्यारी! ओ मेरी प्राण प्यारी!! कहां हो?

(बाहर आकर इधर उधर खोज करनेका नाट्य करता



करवानेको, घरबारकी खबरगीरी करवानेको, लेकिन हायरे भाग्य ! वह चली गई ।

(मिसरियाका प्रवेश)

मिस०—सरकार ! मालकिनी नैहरा तो नहीं गई हैं।

झा०—(कपाल पीटकर) अब क्या करू' रे करम कहां गई, प्राण प्यारी मुझे क्यों छोड़ गई । क्या मैं बूढ़ा हूं, कि उसने मुझे छोड़ दिया। (मिसरियासे) मिसरिया ! देख तो ललकी पेटी है ।

(मिसरिया भीतर जाकर फिर लौट आता है)

मिस०—सरकार पेटी तो है लेकिब वह खुली हुई खाली पड़ी है और लोहेका सन्दूक भी खुला हुआ है ।

झा०—(अवाक होनेका नाट्य करता है) क्या कहता है पेटी भी खुली हुई है और सन्दूक भी ?

मिस०—जी सरकार । चलिये देखिये न ।

झा०—(कपाल ठोककर) नाश ! नाश !! सर्वस्व नाश !!! सारी आशापर पानी फिर गया। जन्मभरका कमाया खतम हो गया। (प्रगट) अच्छा चल तो सही ।

(भीतर जाकर लौटता है और कलेजेमें मुक्का मारकर गिर पड़ता है मिसरिया एक हाथमें कमण्डल और एक हाथमें एक किताब लिये आता है बाहर आकर झाबरमलकी हालत देखकर अवाकसा देरतक खड़ा रह जाता है और पीछे उठाकर बैठता है)



मिस०—(सेठजीके सामनेमें कमण्डल और किताब रखकर) सरकार! ये दो चीजें घरमें अजनवी मिली हैं।

भा०—(कमण्डल देखकर) बाप रे बाप कोई ठग, साधुवंश छुटकर आया था और मेरी सोनेकी चिड़ियेको उड़ाकर ले गया। हायरे! क्या मैं बूढ़ा हूं कि वह मुझे छोड़कर चली गई?

(किताबको लेकर उलटता है और उसे ध्यानपूर्वक देखकर) ओह ओ! यह तो वही हनुमानगढ़ीवाला साधु है जो पिछले दिनों यहां पोखरेपर ठहरा था। अरे दुष्ट! रे पापी! साधु होकर ऐसा कर्म्म! अच्छा ठहर तुझे मैं अभी तीन तेरह कराता हूं। (मिसरियाके प्रति) मिसरिया घोड़ा गाड़ी ठीक कर अभी मैं थानेमें जाकर हुलिया करता हूं और पापीको धूलमें मिलाता हूं।

(मिसरिया भीतर जाता है)

भा०—(स्वगत) कहिये तो भला, साधुका ऐसा कर्म्म? साधुओंकी प्रतिष्ठा इसीलिये न कमती जाती है। ऐसे ऐसे बेहूदोंको घरमें रहते क्या होता है! जटा बढ़ाया टीका लगाया कि साधु हो गये। शैतान! योग, जप, ध्यानका ठिकाना नहीं और साधु बन गये, पूजा पाने लगे।

[मिसरियाका प्रवेश]

मि०—गाड़ी तैय्यार है, चलिये न सरकार!

(दोनों जाते हैं)

दृश्य तीसरा

पद्माकी कुटी।

[पद्माका कृष्णाकी प्रार्थना करते हुये नजर आना]

पद्मा—कितना बुलाया, कितना चीत्कार मचाया, किन्तु हाय, वह बंशीवाला नन्दलाला नहीं आया। कृष्ण, कृष्ण, अब मैं यह माखन मिश्री किसको खिलाऊं? जाऊं उसे यमुनामें बहा आऊं मेरा नीलमणि ग्वालवालोंके साथ यमुना तीर पर खेलता होगा। वह माखन प्रिय माखनको जलमें बहता पायगा तो उसे अवश्य खायगा।

फिर तो यह जीवन हमारा भी सफल हो जायगा।

जब तो यह माखन लाल माखनको हमारे खायगा॥

यह कौन? प्रभु, भिक्षाटन कर आ रहे हैं; किन्तु कन्धोपर आज भिक्षाकी झोली नहीं देखती हूं। तो क्या अब तक वे भिक्षाटनके लिये नहीं गये? यह क्या? उनके पीछे पीछे वह कौन आ रहा है?

[विदुर और उनके पीछे सिरपर भिक्षाकी झोली लिये श्रीकृष्णाका आना]

पद्मा—अरे यह तो हमारा नीलमणि है। प्रभो! प्रभो! आप कैसे निर्दय हैं, आपका हृदय कितना कठोर है।



क्यो अचंभीत हों न आंखें दृश्य ऐसा देखकर।
देखिये तो है धरी भिक्षाकी झोली किसके सिर॥

कृष्ण, कृष्ण! तुम्हारे सिरपर यह बोझा! तुम्हारे चांदमुख पर यह पसीना! आओ नीलमणि, आओ; मेरी गोदमें बैठ जाओ। (कृष्णके सिरपरसे झोली उतारना और गोदमें बिठाना)

कृष्ण—नहीं, नहीं, तुम उनको कुछ मत कहो, मैंने उनको कष्ट होते देखकर खुद ही भिक्षाकी झोली उठा ली थी।

विदुर—दयामय! दयामय! यह क्या कर डाला? इस दासको ऐसे मोहमें फंसाया कि कुछ भी समझमें नहीं आया। विदुरके साथ भी यह लीला।

कृष्ण—नहीं, नहीं, लीला नहीं।

बात यह है देख सकता मैं नहीं दुख आपका।
आपका दुख है मेरा दुख, सुख मेरा सुख आपका॥
इसलिये मैं खुद बखुद झोली उठाई आपकी।
खुद हूं मैं निश्चिन्त जो चिन्ता हटाई आपकी॥

विदुर०—प्रभो, बचाओ, मुझको पापसे बचाओ, संसारके तापसे बचाओ।

बंधनमें इस जगतके कबतक बंधे रहेंगे।
इन पापियोंका कबतक अन्याय हम सहेंगे॥

कृष्ण०—विदुरजी, आप मेरी इच्छा पूरी करनेमें कातर हो रहे हैं?



विदुर—नहीं, नहीं, हम अपने ज्ञान खो रहे हैं। प्रभु, आपकी इच्छा क्या है, यह समझने में हम अज्ञानान्ध हो रहे हैं।

कृष्ण—विदुरजी, मेरी इच्छा अन्यायियों अत्याचारियोंका संहार करना और भारतवर्षमें धर्म राज्यका विस्तार करना है।

गुप्त होता जा रहा है धर्म अब संसार से।
भक्त पीड़ित हो रहे हैं पाप के व्यौहार से॥
साधुओंको कष्ट है दुष्टोंके अत्याचारसे।
पृथ्वी भी दब रही है पापियों के भार से॥
मर मिटेंगे यह न जबतक युद्ध के मैदान में।
धर्म का शुभराज्य फैलेगा न हिन्दुस्तान में॥

विदुर— तो प्रभु, उस कामके अंजाममें आप को इस क्षुद्र तृण से क्या सहायता मिल सकती है?

कृष्ण— विदुर जी, मैं कुरुक्षेत्र में आप को साक्षी रख कर संसारको बताऊंगा कि पापीको उसका किया हुआ पाप ही खा जाता है, दूसरा कोई उसका नाश नहीं करता है। विदुर तुम्हारे द्वारा मैं संसारको अनेक प्रकारकी शिक्षा दूंगा। तुम्हारे द्वारा हमारी सारी इच्छा पूरी हो जायगी; किन्तु तुम मेरा साथ न दोगे तो मेरी इच्छा पूरी होने नहीं पावेगी।

विदुर—तुम्हारी इच्छा पूरी होने नहीं पावेगी? नहीं, नहीं,



दुरात्मा विदुर ऐसा नहीं कर सकता, वह तुम्हारे कामसे कभी पैर पीछे नहीं धर सकता। प्रभु, जो तुम्हारी इच्छा होगी, वही होगा।

कृष्ण—विदुर जी, सुनते हैं, खांडवप्रस्थमें कितना कोलाहल मच रहा है। आज युधिष्ठिरका राजसूय यज्ञ समाप्त होगा, चलिये ज़रा देख आवें।

पद्मा—पहले मेरी गोद्में बैठकर कटोरा भर माखन रोटी खा लेना, तो फिर कहीं जाना।

विदुर—अच्छा, तब तक मैं भी जाऊं, स्नान ध्यानकर भगवान-का भोग लगाऊं।

[विदुरका जाना कृष्णाका माखन खाने चला जाना]



दृश्य चौथा

स्थान—जुआघर

[विदुर, धृतराष्ट्र, भीष्म, दुर्योधन, दुःशासन, शकुनि, कर्ण, पाण्डव और द्रौपदी इत्यादिका नजर आना]

बिदुर— ओह। अन्धेर! अन्धेर!! परमात्मा! देखा नहीं जाता, देखा नहीं जाता, ऐसा भयानक हथफेर! भाई, धृतराष्ट्र मैंने तुम्हें कितना समझाया कि जुआ नाशका मूल और धर्मके प्रतिकूल है; किन्तु तुम्हारी समझमें कुछ भी नहीं आया। तुम्हारी बुद्धिने ऐसा पल्टा खाया कि तुमने अपने हाथों अपने वंशपर कुठार चलाया, सोये हुये सिंहको जगाया।

दुर्योधन—बस, चुप रहो, यहां तुम्हारे बोलनेकी कुछ भी नहीं दरकार है। यह राजकीय व्यापार है, इसमें केवल राजेको हाथ डालनेका अधिकार

विदुर – समझ गये, समझ गये। जिस तरह मरनेवाले रोगी को वैद्यकी बताई हुई दवा अच्छी नहीं लगती, उसी तरह मेरी बातें भी तुम्हें अच्छी नहीं लगती।



परदा पड़ा है आंख पर, तुमको दिखाता कुछ नहीं।
पत्थर पड़ा है अक्लपर तुमको बुझाता कुछ नहीं॥

शकुनि—युधिष्ठिरजी ! अब आप लोग इस वेशको दूर कीजिये, और वनको जाना मंजूर कीजिये; नहीं तो अपने धर्मसे पतित हूजिये।

भीम—धर्म ? इस पापसभामें धर्म ? यदि यहांपर धर्म रहता—यदि यहांपर न्याय और अन्यायका विचार रहता, तो क्या तुम्हारे समान कपटीके कपट खेलका किसी को ध्यान न होता ? ओह ! ऐसा भयानक हथफेर ! सारा माल इधरसे उधर करनेमें ज़रा भी नहीं लगी देर।

दुर्योधन—अरे जाओ, जाओ।

अब तो तुम सब हो चुके, पूरे पूरे फकीर।
अब वनमें जाकर करो, तेरह वर्ष अखीर॥

दुःशासन—हां, जाओ, जाओ, क्योंरी द्रौपदी। अब तू कहां वन वन फिरेगी ? मेरे भाई साहबके दरबारमें रह जा, नाच गाकर उन्हें रिझाना और उनका टुकड़ा पाकर जीवन बिताना।

कर्ण—वाह यार ! नाचनेकी तो खूब कही। आज सचमुच नाचनेहीका दिन है। नाचो, नाचो।

द्रौपदी—अब चुप हो चाण्डाल। अभी ठहर, तेरह वर्षके बाद आयगा तेरा काल।



भीम—धैर्यधर दुःशासन करूंगा मैं तुम्हारा रक्तपान।

अर्जुन—औ कर्णका मैं मिटाऊं दुनियांसे नामोनिशान।

दुर्योधन—अरे जाओ, जाओ, बातें मत बनाओ। अपना मूल्य वान कपड़ा लत्ता इधर लाओ।

अर्जुन—आर्य धर्मराज, भीम, नकुल, सहदेव, अब सब कोई शीघ्र पापात्माओंकी इच्छा पूरी कीजिये। पापियोंके अंगस्पर्शसे हम लोगोंके जो वस्त्र कलुषित हो गये हैं; उन्हें खोल दीजिये।

[सबका वस्त्र त्याग करना]

युधि०— आजतक लोग किया करते थे आदर मुझको।
सिर पे आंखो पे चढ़ाते थे बराबर मुझको॥
अब जो तकदीरके पासेसे हैं चक्कर मुझको।
लोग फूले न समाते हैं जीत कर मुझको॥
क्यों जुआ खेलके घर वार लूटाया मैंने।
राज्य कुलमें यह बड़ा दाग लगाया मैंने॥

दुर्योधन—जाओ, जाओ, यह सब रोना धोना वनहीमें जाकर मचाओ।

शकुनि—याद रखना बारह वर्षका वनवास और एक वर्षका अज्ञात वास। अज्ञात वासमें पता लग जागगा, तो फिर वही बारह वर्ष वनवास और एक वर्ष अज्ञात वास तुम्हारे भाग्यमें आयगा।

युधि०—भाई चलो, अब वन जानेकी तैयारी करें।



दुःशा०—तैयारी ? अरे चुप रह भिखारी। अभी सीधे रास्ते चला जा।

युधि०— दुःशासन! अभी जाता हूं। भाई, इतने रंज क्यों होते हो ? हाय! जिसको मैं अपने प्राणके समान समझता था, वही आज मेरा दिलोजानसे शत्रु हो गया। पृथ्वी! तू फट क्यों न जाती ? मैं तुझमें समा जाऊ, इन अन्यायियों अत्याचारियोंसे छुटकारा पा जाऊं।

(मुंह फेर लेना)

भीम—(बाहु देखते हुए) बाहु, अब कुछ दिनोंके लिये धीरज धर, तेरह वर्षके बाद तू अपना पराक्रम दिखाना और शत्रुओंके हृदयको कंपाना।

अर्जुन—(बालु बरसाते हुए) गांडिव! अधैर्य मत होना, साहसको मत खोना। १३ वर्षके बाद जब वनसे लौट आऊंगा तो युद्धके मैदानमें इसी बालूकी वर्षाके समान मैं शत्रुओं पर शर बरसाऊंगा।

नकुल—मेरे सुन्दर शरीर! तू अपने अनूपम रूपको १३ वर्ष तक भस्मसे ढका रख।

सहदेव—चलिये भाई, हमलोग १३ वर्ष वनमें गुप्त रहेंगे और चौहवें वर्षमें द्वादशादित्यके समान प्रकाशमान होंगे।

द्रौपदी— रे हस्तिना! आभागिनी द्रौपदी तेरह वर्षके लिये वन को चली। जब मैं वनसे लौट आऊं, तो जिसने हमारी



यह दुर्दशा की है, उसकी रजस्वला पत्नियोंको जिसमें पति पुत्र हीना कर पाऊं।

[द्रौपदीके साथ पच पांडवका जाना]

विदुर— अन्धराज ! सुना ? पांडवोंकी प्रतिज्ञाओंको सुना

तुम्हारे वंसके मिटनेकी सूरत होती जाती है।
कि जाहिर हर तरह मनकी कदूरत होती जाती है॥
किया है अपने ही हाथोंसे दुर्योधनने सब सामान।
कि इस फूले फले घरमें कदूरत होती जाती है॥

धृतराष्ट्र—विदुर, तुम क्या हमें बार-बार पांडवोंका डर दिखाते हो ? जब देखता हूं तब तुम पांडवोंहीकी बात उठाते हो, हमेशा पांडव, पांडव। पांडव तुम्हें बहुत प्यारे हैं, तो जाओ, उन्हीके साथ जाओ, मुझको तुमसे कोई काम नहीं। सञ्जय ! सञ्जय !! मुझकोअपने महलको ले चलो।

(क्रोधके वेगमें सजयके साथ जाना)

विदुर— जाऊंगा, जाऊंगा और अवश्य जाऊंगा। धर्मात्मा पाँडव जिस पथके पथिक हुए हैं, मैं तुम्हे कहे देता हूं—अब तुम्हारे पुत्रोंका निस्तार नहीं—निस्तार नहीं—तेरह वर्ष पूरा होनेपर सभीका संहार हो जायगा।

(जाना)

भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य—नाश हुआ, नाश हुआ, कुरुकुलका नाश हुआ।

(जाना)



शकुनि— चलो अब चलकर आनन्द मनावें और जी बहलावें।

दुःशा०— मामा, चलो, आज स्वर्गसे उर्वशीको मगावेंगे और उसे रातभर नचावेंगे।

दुर्योधन—चलो भाई, अब सुखकी नींद सोऊं और आनन्दित होऊं।

[सबका जाना]



दृश्य पांचवा

स्थान- एक पक्का मकान ।

[अलबेला दास और शान्ति दोनों गाते और नाचते हैं]

थियेटर

दोनों—गावो नाचो छमा छम नाचो ॥ टेक ॥

शां —आओ प्यारे आओ,

अ०— गले मेरी लग जाओ,

शां०— प्यारा, न्यारा, रूप तिहारा, दिलमें देता शूल ॥ गावो ।

(दाईं ओरसे टकोर दास और चम्पाका गाते हुए प्रवेश)

च०— दिलदार हमारे,

टं०— तनमन जान तिहारे,

च०— आओ हिलमिल रंग मचाओ, हो हो करके खु़श ॥

सब— गावो नाचो छमा छम नाचो ॥

(बाईं ओरसे ढोंढाई भगत और मगलीका गाते हुए प्रवेश)

मं०— दिलको शाद करना यार,

ढो०—न होना मुझसे न्यार,

मं०—दे गल वहियां गावो, नाचो, चैन उड़ाओ खू़ब ।

सब— गावो नाचो छमा छम नाचो ॥

(हाथमें हाथ मिला कर)



(इसी बीच चुपकेसे झाबर मलका प्रवेश। झाबरमल
झुक झुक करके लोगोंका नाच-गान देखता और
क्रोधित होते तथा लोगोंको लट्ठसे मारनेका
संकेत करता है। पश्चात भीतर जा
कर गाना खतम होते न होते
दो चार पुलिस वालोंको
साथलिये आता है
और तीनों साधु-
ओंको हथकड़ी
लगवाता
है)

झा०—(जमादारको संबोधन करके) जमादार साहब ! लगाइये दो चार धौल इस पापी साधुको। बापरे बाप कहानेको साधु और करनी छुछुन्दरकी। इसीलिये तो संसारकी ऐसी हालत है।

जमा०—नहीं साहब मारनेका हुक्म नहीं है।

झा०—(स्वगत) ओह ! पुलिसवाले भी बड़े नख़रेबाज़ होते हैं बिना हाथ गरमाये किसीका कुछ सुनतेही नहीं। (जेबसे कुछ रुपये निकालकर जमादारके हाथमें धरकर) होइये आपकी दस्तूरी मिलगई न, अब कीजिये शैतानोंको हलुआ हैंरान।

जमा०—(पुलिसोंको संकेत करके) मारो बदमाशोंको, खोपड़ी



तोड़ दो। बद्ज़ात कहींके ; वेश साधुका और करनी चमार की।

(पुलिसवाले मुक्का उठाते हैं)

अल०—(डांटकर) खबरदार! साधुओंसे छेड़छाड़ मत करो नहीं तो शाप दे दूंगा।

(मुक्का गिरा देता है)

ट०— जर-जर कर दूंगा रामजीके आसरेसे।

ढो०—साधुको ठट्ठा मत समझो नहीं तो ठीक हो जाओगे।

ज०— रे शैतान! तू साधु कबसे? साधुका यही काम है कि पराई स्त्रीको फुसला ले और दूसरेके धनको ठगले?

अ०— झूठा दोषारोपण साधुपर? क्या तुम कह सकते हो कि मैंने किसी भी गैर शख्सका धन ठगा है अथवा पराई स्त्रीपर बुरी नज़र फेरी है?

ज०—सबूत सामने रहते भी गल थेथरई? मार बदमाश चोट्टाको।

अ०—मारनेका नाम मत लो पहले बातें सुनलो।

टं०—बिलकुल ठीक रामजीके आसरेसे।

झा०—जमादार साहब! यह बिलकुल पाजी है कि बात बनाना तो इसका पेशा है। मारिये इसपर दया करना ठीक नहीं।

ढो०—यह बूढ़ा बिलकुल पाजी है।

अ०—जमादार! क्या तुमने हिन्दु होकर भी "सियाराम मय सब जगजानी" और फिर भी "आत्मवत् सर्व्व भूतेषु"



को नहीं पढ़ा। हम साधु लोग सर्व्वत्र रमन करने वाले हैं। सब लोगोंको समान समान रूपसे समझते हैं। जैसा तुम हो वैसा मैं हूं, जैसा मैं हूं वैसा ये हैं, वह है, वे हैं। फिर भी इस औरतको, परमात्मा की बनाई इस युवतीको सेठने न रखा मैंने ही रखा, दोनों बराबर है, वरन् मुझ साधु की स्वच्छता, और सद्भावना विशेष रूपसे यह है कि जहां-पर यह बूढ़ा इसे जोरूकी नजरसे देखता है वहां मैं चेलो की दृष्टिसे देखता हूं। अब कहो मैं पापी कि यह बूढ़ा पापी? मैं दोषी कि वह?

झा०—जमींदारजी यह बड़ा बतबबुआ है। इसपर दया नहीं।

जमा०—(अलवेलानन्दको दो मुक्का लगा कर) बदमाश साधु की यही नीति है? तुमलोग ठठोली करता है, साधु कैसे?

ट०—यह सवाल मत कीजिये रामजीके आसरेसे। साधु होनेका पूरा प्रमाण हमलोगोंको है रामजीके आसरेसे।

अ०—हम लोग दोनों शाम गंगा स्नान करते हैं। कुशासन पर कमलासन साध, आंखोको मूंद कर ध्यान धरते हैं। विभूति सम्पूर्ण शरीरमें लगाते हैं। गेरुआ वस्त्र पहनते हैं। कमंडलसे पानी पीते हैं, फिर भी साधु कैसे नहीं हैं?

ट०—भातको प्रसाद कहते हैं, दालको बेकुंठी कहते हैं, नमक



को रामरस कहते हैं, तरकारीको साग कहते हैं, फिर साधु कैसे नहीं हैं रामजीके आसरेसे तुमही कहो तो जमादार ?

ढो०—झारा फिरते हैं मन्त्र पढ़ कर, पेशाब करते हैं, मन्त्र पढ़ कर, पनछुआ करके एक एक टोकड़ी मिट्टी और दस दस गगड़ा जलसे हाथ मांजते हैं, जितने बार झाड़ा फिरते हैं तितने बार स्नान करते हैं फिर भी साधु कैसे नहीं हैं।

अ०—किसीका छुआ हुआ नहीं खाते हैं घंटी डुलाकर ठाकुरजी को भोग लगाते हैं,ठाकुरजीको सुलाते हैं, जगाते हैं. पन्हाते हैं, ओढ़ाते हैं, नहलाते हैं, इत्यादि इत्यादि फिर भी साधु न हीं कहो तो यह तुम्हारी ज़बरदस्ती है।

ट०— तब क्या साधुको लंगरी होती है रामजीके आसरेसे ?

जमा०— शैतानका सूरत उल्लूका पट्ठा बात बनानेमें तो कमाल है। रे बेहुदे! कह तो कि औरतोंके साथ नाच गान करना, ठगेती करना, बकध्यान लगाना इत्यादि काम साधु का है ? मार उल्लूको।

(सब मारते हुए ले जाते हैं और झाबर मल तीनों औरतोंको आगे आगे किये पोछेसे खुश होनेका नाट्य करता कुद्‌कता हुआ जाता है) और कहता है :—

झा०— चल हारमजादी सब तुमलोगोंका सघोर मेटाता हूं।



क्या रुपया मंगनीका था। चक्का जैसा नक़द माल तो तेरे माय बापको दिया था।

(अलग हो, कर खड़े खड़े कुल तमासेको देखनेवाले एक देश सेवकका सामनेमें प्रवेश)

दे० से०— धिक्कार रे बूढ़े! तुमने एक निर्दोष बालाको नाश कर दिया, उसके जीवनको व्यर्थ कर दिया। जब तुम्हारे ऐसे बूढ़े व्याह करें तो लम्पटलोग साधु बनकर परस्त्रियोंके संग रंग क्यों न मचावें और वेश्याओंकी संख्या इतनी अधिक क्यों न बढ़े

(गाता है)

बिगड़ा हिन्दूका समाज ॥

साधुबाबा बने रंगीले घर घर जावें घूस।
झूठ फूसकी बात बनाकर लेते पैसे चूस॥ बिगड़ा० ॥
नव युवकोंका व्याह नहीं हो, बच्चेके घर नार।
बूढ़े बाबा साठ बरसके, करें किशोरी प्यार ॥ बि० ॥
लंगरे लूले धक्के खावें, जो मांगे कुछ नाज।
हट्ठे कट्ठे संढ मुकुंढे, लो लुप पवि पोंवराज॥ बि० ॥
वेद शास्त्रसे नाक सिकोरें पढ़ते नभेल प्रात।
पूजा अर्चन व्यर्थ बतावे, गप्प करें दिनरात॥ बि० ॥
घरमें नारी व्याही रोवे, रूप अनूप अपार।
अपने तो जा जूता झारें, रंडीके दरबार ॥ बि० ॥



शुभ कामोमें जो चन्दा मांगो, देवें नहीं छदाम।
पर रंडीके तान तोड़नते अरपत दाम तमाम ॥ वि० ॥
जबतक चाल बनी थी साबिक, थी सुयश जगछाई।
उसके बिगड़े सिगरी आन्नत "शिव" समाज सरढाई ॥बि०
चेतो चेतो यारो जल्दी नाश नहीं तो होगा।
स्वल्प समयमें नाम मिटेगा, जुटा यहीं संयोगा ॥ वि० ॥

(गाते हुए प्रस्थान)





दृश्य छठा

कुटीर।

[कुन्ती और पद्माका आना]

कुन्ती—बहन पद्मा ! यह क्या सुनती हूं ? दुरात्मा दुर्योधन युद्ध-की तैयारी कर रहा है। वह हमारे बच्चों के प्राण लेनेपर तुला हुआ है। हाय गोविन्द, यह विपत्तिपर विपत्ति नहीं सही जाती, यह तकलीफ आंखो देखी नहीं जाती।

पद्मा—दीदी, धीरज धरो, इतना शोक मत करो।

कुन्ती—गोविन्द ! अनाथ पांडवोंके एक तुम्हीं नाथ हो। बचाओ हमारे बच्चोंके लिये तुम क्या उपाय करते हो ? विपद भञ्जन ! तुम इस विपदके समय क्यों निश्चिन्त हो रहे हो ?

दीनबन्धु क्यों दीन को, ऐसो दियो भुलाय।
करुणा निधि ! करुणा करो, दुख हरो यदुराय ॥

पद्मा—दीदी ! डरती क्यों हो ? वह तीन लोक का स्वामी-अन्तर्यामी क्या कभी निश्चिन्त बैठा रह सकता है ?

वह भक्त वत्सल है कहाता भक्त उसका प्राण है।
निज भक्त के कल्याण का रखता सदा वह ध्यान है ॥

कुन्ती—हां बहन, मैं गोविन्दपर ही विश्वास किये बैठी हूं। नहीं तो जिसी समय हमारे बच्चोंको वनवास हुआ उसी



समय मेरा नाश हो गया रहता। वहन पद्मा ! मैं कैसी अभागिनी हूं कि मेरे कारण गोविन्द भी चैन से रहने नहीं पाते पांडवोंके लिये वे क्या क्या कष्ट न उठाते ? हाय गोविन्द (रोना)

पद्मा दीदी, रोओ नहीं। चलो, सन्ध्या स्नान कर गोविन्द को फूल और तुलसीदल चढ़ाऊं और उसीके ध्यान में आज रात बिताऊं। यदि वह सन्तुष्ट हो जायगा, तो हम लोगोंका सब कुछ बन आयगा। दुरात्मा दुर्योधन को फौज़ इकट्ठी करने दो। पांडवोंके विरुद्ध षड़यन्त्र रचने दो, कोई परवा नहीं।

राखन हारा साइयां, मारिन सकिहैं कोय।
वाल न बांका करि सकै, जो जग बैरी होय॥

(दोनोंका जाना)

(श्रीकृष्ण और दारुकका प्रवेश)

कृष्ण—दारुक, देखते हो ? यही भक्तवर विदुर की कुटी है। देखो, यहां पर कैसा स्वभाविक सौन्दर्य छा रहा है जो राजमहलोंसे बढ़कर भी मनको लुभा रहा है। देखो दारुक, भक्त के निकट किस तरह मान, अपमान हिंसा, द्वेष और अभिमान का नामोनिशान रहने नहीं पाता। इसीलिये भक्त का दिया हुआ तुलशी चन्दन मुझे अभक्त के दिये हुए मणि मुक्ता से भी अधिक मुल्यवान् बुझाता है ! वत्स आज मैं तुम्हें दिखाऊंगा कि किस कारण आज दुरात्मा



दुर्योधनकी राजमहता छोड़ कर मैं विदुरकी टूटो फूटी झोपड़ीका अतिथि होने चला हूं। विदुर-विदुर महात्मा विदुर।

नेपथ्य में पद्मावति-कौन ? मेरा कृष्ण ? आती हुं चांद।

दारूक—यह क्या प्रभो ? वह कौनसी स्त्री दिखा रही हैं जो कृष्ण कृण करते हुए इस तरफ पागल की तरह दौड़ी आरही है।

कृष्ण—दारूक, यह महात्मा विदुरकी धर्मपत्नी पद्मावती हमारा कंठस्वर पहचान कर प्रेम से विह्वल हो दौरी आरही है। जाऊं दारूक, आगे मैंही जाकर उसके चरणों में शीश झुकाऊं। अहा-हा—केसी उन्मादनी भक्ति है ? केसी अपूर्व भक्ति है। समस्त संसार के देखने की वस्तु है।

(वेग से प्रस्थान)

दारुक—सचमुच, देखने की वस्तु है। देखो, देखो, ऐ संसारके नासियों। देखो।

भक्ति यही बल जाहि के, रजि कय प्रभु गोलोक।
आये यहि भूलोक में, हरण भक्त उर शोक॥

(कृष्णको गोदमें लिये पद्माका प्रवेश)

पद्मा— जीवनधन ! आज तुम्हारे चेहरे पर यह उदासी क्यों छा रही है ? तुम्हारी मोहनी मूरत सांवरी सूरत कुम्हलाई हुई क्यों दिखा रही है ?



कृष्ण—बड़ी भूख लग रही है। आज सबेरेसे अभी तक कुछ नहीं खाया है। जाओ, खानेके लिये कुछ ले आओ।

पद्मा—भूख लगी है? (स्वगत) कहां जाऊं? क्या लाऊं? हाय कृष्ण! इस भिखारिणीके घरमें क्या है जो तुम्हें खिलाऊं? प्रभु भी अबतक भिक्षाटन कर न आये जो यह अभागिनी कृष्णको और नहीं तो एक मुट्ठी अन्न भी खिलाये। (प्रगट) बैठो कृष्ण! इस कुशके आशन पर बैठो। मैं जाती हूं; देखूं, घरमें क्या ढूंढ़ पाती हूं।

(जाना)

दारुक—प्रभो! यह भिखारिणीके साथ क्या छलना करते हो? दुर्योधनके घर राज भोग छोड़कर क्या एक मुट्ठी अन्नके लिये मरते हो?

कृष्ण—दारुक! दारुक!! तुम फिर उस धन गर्वित दुरात्मा दुर्योधनका नाम लेते हो? उसके घरमें राजभोग नहीं-विष-भोग होता है। मेरा भक्त जो कुछ मुझे देगा उसीको मैं अमृत समझ कर खाऊंगा।

(उद्भ्रान्तकी तरह कुन्तीका प्रवेश)

कुन्ती—कृष्ण, कृष्ण, हमारे बच्चोंको बचाओ, दुर्योधनके हाथसे मेरे बच्चोंको बचाओ। हमारे बच्चोंको लाहके घरमें सुला कर उसमें आग लगानेसे, छलसे जूआके खेलमें हार कर उनको वनवासी करनेसे, उस दुरात्माको सन्तोष न हुआ तो अब वह उनसे लड़नेके लिये लड़ाईकी तैयारी करने चला



है। हा युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव। तुम लोग उस भीषण युद्धसे किस प्रकार रक्षा पा सकोगे ?

(मुर्च्छित होना)

कृष्ण—अरे यह क्या ? मुर्च्छित हो गई ? अरी फूआ ! तू चिन्ता न कर, इस वार दुर्योधनका वंश सहित संहार हो जायगा और पाण्डवोंका उद्धार हो जायगा।

आप अपना पाप कौरव वंशको खा जायगा।
पाण्डवोंका धर्मसे जेका ध्वजा फहरायगा॥

कुन्ती—सच कहते हो कृष्ण ?

कृष्ण— हां फूआ, सच कहता हूं। तुम अभी जाओ, पद्मा मेरे लियें कुछ खाना लाने गई, उसे जल्द बुलाओ।

कुन्ती—पद्मा खानेके लिये क्या लायगी ? उसकी टूटी फूटी झोपड़ीमें है ही क्या ? गोपाल ! आज तुम्हारी राज रानी फूआका यह हाल है कि वह एक मुट्ठी चावलके लिये बेहाल है। जाऊ, देखूं, अभागिनी पद्मा क्या करती हैं।

(जाना)

दारुक—प्रभु ! अब देखा नही जाता देखा नहीं जाता। गोपाल आज राजरानीका यह हाल ?

कृष्ण— क्या हाल यह हाल तो कालका है। देहीको इससे क्या सम्बन्ध ?

[पद्माका प्रवेश]



पद्मा—आओ कृष्ण, आओ, मेरी गोदमें बैठजाओ। मैं तुम्हे यह पका केला खिलाती हूं, इसे खाओ।

(केलाका सार फेंक कर छिलका खिलाना)

कृष्ण— अहा !

कैसा मधुर है स्वाद ऐसा अबतक पाया नहीं।
इन प्रेमके हाथोंसे ऐसा प्रेम फल खाया नहीं॥

(कन्धेपर झोली लिये विदुरका प्रवेश)

विदुर—यह क्या ? यह क्या ? विदुरकी झोपड़ीमें श्री कृष्णचन्द्रका उदय ? यह क्या पद्मा, यह क्या करती हो ! प्रेमके आवेश में आकर क्या करती हो ? केलेका सार फेंक कर प्रभुके मुखमें केलेका छिलका धरती हो ? हाय ! प्रभु भी उसीको खुशीसे खा रहे हैं। पद्मा, पद्मा, तूने सर्वनाश किया सर्वनाश किया।

पद्मा— हैं—मैं क्या कर रही हूं ? प्रभुके मुखमें केलेका छिलका धर रही हूं ? कृष्ण, कृष्ण। क्षमा करना। क्षमा करना। इस अभागिनीके दोषको हृदयमें न धरना।

कृष्ण—नहीं, नहीं। अरे मैंने तो तुम्हारे हाथोंसे अमृत पाया है तुम्हारे केलेके छिलकेमें अमृतका स्वाद आया है।

विदुर—प्रभु, क्या तुम इसीसे दीनबन्धु दयासिन्धु कहलाते हो ?

कृष्ण—अभी क्या यह सब बातें बनाते हो ? क्या इसीसे मेरी भूख मिटाना चाहते हो ? तुम अभी भिक्षा मांगकर आये



हो, दो मुझे एक मुट्ठी चावल दो जिससे मैं खाऊं और अपनी भूख मिटाऊं ।

विदुर—(स्वगत) हाय, आज विदुरके भाग्यमें चावल भी नहीं बदा था आज भिक्षामें एक मुट्ठो खुद्दी मिली है, उसे मैं प्रभुको क्यों कर दूं ?

कृष्ण—दो न, मैं भूखसे व्याकुल हो रहा हूं । ओह, विदुर तुम कितने निठुर हो ।

विदुर—लो प्रभु, तुम्हारी यही इच्छा है तो लो ।

[देना]

कृष्ण—दो । (लेकर खाना) फूआ, पानी दो । (पद्माका पानी देना और कृष्णका पीना) ओह अब मिज़ाज सन्तुष्ट हुआ । अब फूआ, जो खुद्दी बच गई है, उसे ले जाओ और भात बनाओ । आज हम यहीं रात बितायेंगे; कल पच पांडवोंके लिये पंचग्राम मांगनेके हेतु कुरु सभाको जायेंगे ।

विदुर— प्रभु ! यह एक मुट्ठी चावल क्या करेगा ? किस किस का पेट भरेगा ।

कृष्ण—सबका पेट भरेगा ।

विदुर—क्या फिर भिक्षाटनको जाऊं ओर कुछ अधिक चावल मांग लाऊं ?

कृष्ण—नहीं, कोई जरूरत नहीं । भक्तवर ! इस सन्ध्याके समय तुम कहां जाओगे, किसके दर कि ठोकर खाओगे ?



चलो, कुटीमें चल कर अभी आराम करें।

विदुर—जैसी आज्ञा।

गाना।

नाथ चरित तव समझ न आवे॥
मोद सहित लय गोद यशोदा माखन जाहि खिलावे।
राजभोग तजि सोइ विदुर घर चावल खावे॥

(सबका जाना)



दृश्य सातवां

पहाड़, जंगल।

[रथा रङ्गिनी भगवतीका प्रवेश]

भगवती— चले, चले, कुरुक्षेत्रमें घमसान युद्ध चले, दिनरात युद्ध चले। इन महापापी कुटिल कुचक्री क्षत्रिय राजोंका संहार हो जाय–भारतवर्षमें धर्मराज्यका विस्तार हो जाय। युद्ध, युद्ध, चले, चले, घमसान युद्ध चले, दिन रात युद्ध चले। हाः– हाः, युद्ध--युद्ध--युद्ध।

(वेगसे विजयाका प्रवेश)

विजया—यह क्या मा ? यह क्या करती है ? अट्टहास कर पागलकी तरह केवल युद्ध—युद्ध बकती है। कभी कैलाश पर्वतपर जाती हैं, तो कभी कुरुक्षेत्रका दौड़ लगाती है। यह क्या महादेवि।

भगवती—हाः हाः—कुरुक्षेत्रमें खूनकी महानदी वह रही है। उसमें भक्त अर्जुनको लेकर हमारा नीलमणि नाच रहा है। हाः हाः—कृष्ण, कृष्ण, नाचो, नाचो। मैं भी तुम्हारे साथ नाचती हूं।

विजया—क्या बकती हो मा ? चलो, कैलाश पर्वतको चलो।



भगवती—दूर पगली। अरी देख, यह देख। कुरुक्षेत्रमें युद्ध का दृश्य देख।

जूझत है योधागण झुंड झुंड रुंड मुंड,
धरती पै पकड़ तलवारके वारमें।
धरि धरि धोर पुनि पुनि वबीर धावे;
बौरन पर भौर जैसे धावें मधुप्यारमें॥
काहूको कटत हाथ, काहूको कटत माथ,
युद्ध अति क्रुध होत, वीरोंकी हुङ्कारमें।
लहुकी धारमें तैरत हैं अङ्ग भङ्ग होय,
जैसे मछली और कछुये पानीकी धारमें॥

[नेपथ्यमें—रोनेका आवाज]

विजया—मां! यह कौन रोदन करता है? ओह. इसे सुनकर तो कलेजा फटा जारहा है।

भगवती—विजये! यह कोरवोंकी स्त्रियां पतिशोकसे व्याकुल हो रही हैं; अपने फूटे भागपर रो रही हैं। अभागिनी कुरु-नारी गण! रोओ, रोओ खूब रोओ। आज तुम न रोओगी तो और कौन रोयेगा?

विजया—तो क्या मां! कौरवोंका नाश हो गया?

भगवती—हां विजये। आज अठारह दिनके वाद कुरुक्षेत्रका युद्ध समाप्त हुआ। कौरवोंका नाश हुआ। देखो, महर्षि व्यास पुत्र शोकसे शोकित धृतराष्ट्रको सान्त्वना दे रहे हैं। देखो, वह हमारा नीलमणि अब द्वारकाको चला।



वजया— चलो, अव हम लोग भी कैलाश पर्वतको चलें।

भगवती—देखो विजये! यह महात्मा विदुरकी कुटी है। देखो, विदुर रूपी यम यमराज्यको जानेकी तैयार कर रहा है। वह देखो, महात्मा विदुर महाप्रस्थानके लिये गंगातीर चले।

निज काम पूरा करलिया आकर विदुर इस लोकमें।
अव जा रहा है स्वर्गको वह तज सभीको शोकमें॥

विजया—मा! यह क्या? महात्मा विदुर धर्मराज्यकी मूर्ति धारण कर यमराज्यको जा रहे हैं।

भगवती—विजये! जानती नहीं? मांडव्य ऋषिके शापसे मृत्यु-पति यमने विदुरका रूप धारण कर कुरु कुलमें जन्म लिया था। वह देखो; धर्मराजके मिलनसे निरानन्द यमराज सभामें कितना आनन्द मच रहा है। गाओ—विजये—गाओ धर्मका विजय गान गाओ।

गाना।

मिटा पापोंका भार, सुखी है संसार।
सुखसों रहें सत्पथ गहें फैले जगमें धरम,
नाचे गावें मनावें धरमकी जय सब॥

सव— वोलो; जय धर्मकी जय!!!

ड्राप।

हमारे यहांसे निम्नलिखित उत्तमोत्तम

पुस्तकें मंगाकर पढ़िये